REG. NO. BR/2025/0487469

टीचर्स ऑफ़ बिहार (द चेंज मेकर्स)

अंक : 3
अगस्त-दिसंबर
अर्धवार्षिक पत्रिका
2025

गद्य गुंजन

बिहार के शिक्षकों द्वारा रचित गद्य का संकलन

www.teachersofbihar.org

टीचर्स ऑफ़ बिहार (द चेंज मेकर्स)
द्वारा निर्गत ई-पत्रिका

परिवर्तन ही सृष्टि है, जीवन है।
स्थिर होना मृत्यु है, निश्चेष्ट शांति मरण है।
- जयशंकर प्रसाद

वेबसाइट पर जाने
के लिए QR कोड
स्कैन करें

गद्य गुंजन

अंक : 3 । अर्धवार्षिक पत्रिका । 2025

संपादक

आस्था दीपाली

रा० कृत उ० मा० (+2) विद्यालय, कुढ़नी, मुज़फ़्फ़रपुर

संस्थापक

शिव कुमार

उत्क्रमित मध्य विद्यालय, नारायणपुर, बिक्रम, पटना

तकनीकी सहयोग

ई. शिवेंद्र प्रकाश सुमन

डिज़ाइन एवं सेटिंग : आस्था दीपाली

शुभकामना संदेश

टीचर्स ऑफ़ बिहार (द चेंज मेकर्स) द्वारा निर्गत ई-पत्रिका गद्यगुंजन के प्रकाशन पर पत्रिका के संस्थापक, संपादक मंडल एवं सभी रचनाकारों को हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ।

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि इस अंक में सभी रचनाएँ ज्ञान को हमारी सांस्कृतिक विरासत और मानवीय मूल्यों से जोड़ती हुई अभिव्यक्त की गई हैं।शिक्षकों के अनुभवों की गहराई, शैक्षणिक एवं मूल्य आधारित रचनाओं की प्रेरणा तथा दिवस विशेष पर दी गई जानकारी अति सराहनीय शैली में प्रस्तुत की गई है जो समाज में संवेदनशीलता और उत्तरदायित्व की भावना को संवर्धित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

मुझे पूर्ण विश्वास है की यह पत्रिका निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर होते हुए पाठकों को प्रेरित और मार्गदर्शित करने का एक सशक्त माध्यम बनेगी।

गद्यगुंजन की उत्तरोत्तर सफलता, व्यापक प्रसार और उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी मंगलकामनाएँ।

सस्नेह,

शशि प्रभा

पूर्व प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (योजना एवं अनुसंधान विभाग)

सीआईईटी, एनसीईआरटी, नई दिल्ली

शुभकामना संदेश

"भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन नहीं, वह संस्कृति की आत्मा और सभ्यता की स्मृति होती है।" 'टीचर्स ऑफ बिहार' द्वारा प्रकाशित गद्यगुंजन ई-मैगजीन के इस प्रशंसनीय प्रयास के लिए मैं हृदय से साधुवाद प्रेषित करता हूँ। यह पत्रिका न केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त मंच है, बल्कि भाषा, साहित्य और शिक्षकीय चेतना के समन्वित विकास का एक सार्थक उपक्रम भी है।

आज के समय में, जब भाषा की सरसता और संवेदनशीलता पर अनेक चुनौतियाँ उपस्थित हैं, ऐसे में गद्यगुंजन का यह प्रयास गद्य परंपरा को नई ऊर्जा, नई दृष्टि और नया आत्मविश्वास प्रदान करता है। इसमें संकलित आलेख, विचार और अनुभूतियाँ शिक्षकों की बौद्धिक प्रतिबद्धता तथा साहित्यिक उत्तरदायित्व का प्रमाण हैं।

मेरा विश्वास है कि यह ई-मैगजीन भाषा-संस्कार, साहित्यिक विमर्श और वैचारिक समृद्धि की दिशा में सतत अग्रसर रहेगी तथा शिक्षक समाज को सृजनशीलता के लिए प्रेरित करेगी। टीचर्स ऑफ बिहार की पूरी टीम को इस अभिनव प्रयास हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

ईश्वर से कामना है कि गद्यगुंजन निरंतर प्रगति करे और भाषा-साहित्य के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करे।

~ प्रो. ज्ञानदेव मणि त्रिपाठी
पूर्व डीन, शिक्षा संकाय,
आर्यभट्ट ज्ञान विश्वविद्यालय,पटना

किसी भी समाज की बौद्धिक उन्नति उसकी भाषा और साहित्य की समृद्धि से आँकी जाती है। जब शिक्षक समुदाय स्वयं सृजन के पथ पर अग्रसर होता है, तब वह केवल ज्ञान का संवाहक नहीं बल्कि संस्कृति का संरक्षक भी बन जाता है। 'गद्यगुंजन' ई-पत्रिका इसी सृजनशील चेतना का सार्थक और प्रेरणादायी प्रतिफल है।

यह पत्रिका शिक्षकीय अनुभवों, विचारों और संवेदनाओं को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करने का एक ऐसा सेतु है, जो कक्षा और समाज के बीच रचनात्मक संवाद स्थापित करता है। इसमें संकलित रचनाएँ यह प्रमाणित करती हैं कि शिक्षा केवल पाठ्यक्रम तक सीमित प्रक्रिया नहीं, बल्कि निरंतर चलने वाला सांस्कृतिक और वैचारिक अभियान है।

आज के परिवर्तनशील समय में भाषा संरक्षण और साहित्य सृजन की चुनौतियाँ निरंतर बढ़ रही हैं। ऐसे दौर में 'गद्यगुंजन' का नियमित प्रकाशन हिंदी गद्य परंपरा को नवीन ऊर्जा प्रदान करने वाला महत्त्वपूर्ण प्रयास है। यह मंच शिक्षकों को चिंतनशील लेखक और उनकी सृजनात्मक क्षमता को नई दिशा देता है।

इस महत्त्वपूर्ण साहित्यिक उपक्रम के लिए मैं संपादक, रचनाकारों और पूरी टीम को हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करती हूँ।

Sushmita Kumari

~ सुष्मिता झा,
जिला कला एवं संस्कृति पदाधिकारी,
मुज़फ़्फ़रपुर

संपादकीय

प्रिय पाठक,

'गद्यगुंजन' के इस नवीन अंक को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। यह अंक इस दृष्टि से विशेष है कि इसमें संकलित रचनाओं को विधागत आधार पर अलग-अलग खंडों में सुव्यवस्थित रूप से विभाजित किया गया है। हमारा प्रयास रहा है कि प्रत्येक रचना अपने स्वाभाविक परिवेश और स्वरूप के साथ पाठकों तक पहुँचे तथा गद्य की विविध रंगछटाओं का समुचित प्रतिनिधित्व कर सके।

इस अंक में "लेखक अपने शब्दों में" खंड के अंतर्गत हिंदी साहित्य के प्रतिनिधि रचनाकारों के आत्मीय विचारों और रचनात्मक अनुभूतियों को स्थान दिया गया है। "मूल्यों की पाठशाला" खंड में नैतिक एवं मानवीय मूल्यों से जुड़ी प्रेरक रचनाएँ संकलित हैं, जो वर्तमान समय में विशेष प्रासंगिकता रखती हैं। "शैक्षणिक" खंड शिक्षा–जगत से जुड़े अनुभवों, विचारों और नवाचारों को अभिव्यक्त करता है, वहीं "स्वानुभव" खंड जीवन के यथार्थ अनुभवों को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करता है। "दिवस विशेष" खंड में महत्वपूर्ण राष्ट्रीय–सामाजिक प्रसंगों से संबंधित लेखों को सम्मिलित किया गया है, जबकि "पथ की स्मृतियाँ" जीवन–यात्रा के अनुभवों और यादों को सहेजती आत्मकथात्मक अनुभूतियों का संवेदनशील खंड है। इन सभी खंडों में शिक्षकों द्वारा गद्य की विभिन्न विधाओं में रचित उत्कृष्ट रचनाओं को स्थान दिया गया है, जो उनकी सृजनशीलता, चिंतनशीलता और संवेदनशील दृष्टि का प्रमाण हैं।

साथ ही, पाठकों और रचनाकारों की सुविधा तथा पत्रिका की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए 'गद्यगुंजन' को अब अर्धवार्षिक रूप में प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया है। हमें विश्वास है कि यह परिवर्तन पत्रिका को और अधिक समृद्ध, परिपक्व एवं उपयोगी बनाएगा।

हम सभी रचनाकारों, सहयोगियों और पाठकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं, जिनके स्नेह और सहयोग से यह प्रयास संभव हो सका है। आशा है कि 'गद्यगुंजन' का यह अंक आपको ज्ञानवर्धक, प्रेरणादायक और रुचिकर लगेगा। यह अंक आपको कैसा लगा, अवश्य बताएं तथा इसे और बेहतर बनाने के लिए अपनी प्रतिक्रिया फीडबैक फॉर्म में अवश्य लिखें।

-आस्था दीपाली
शिक्षिका,
राजकीयकृत उच्च माध्यमिक (+2) विद्यालय, कुढ़नी, मुज़फ़्फ़रपुर, बिहार

इस अंक में...

लेखक : अपने शब्दों में

1. गेहूँ बनाम गुलाब : रामवृक्ष बेनीपुरी 9

मूल्यों की पाठशाला

1. बचपन और उसकी यादें : रुचिका 13
2. सुनीता का त्याग : लवली कुमारी 14
3. मास्टर साहब : डॉ स्नेहलता द्विवेदी आर्या 15
4. दादी माँ की सीख : गिरिधर कुमार 16
5. हमारा व्यक्तित्व : राम किशोर पाठक 17
6. रजिया की शादी : नीतू रानी 18
7. कोसी क्षेत्र : नेहा कुमारी 19
8. नेकदिल राजा : कंचन प्रभा 20
9. तेते पाँव पसारिए : मनु कुमारी 22
10. अजनबी से अपनापन : रिन्जु कुमारी 23
11. एक दीपक की क्रांति : निलेश कुमार मंडल 24
12. शीशे वाली लड़की : अवधेश कुमार 25

शैक्षणिक

1. समाज में बुजुर्गों का स्थान : गिरीन्द्र मोहन झा 27
2. वर्तमान परिदृश्य में नैतिक शिक्षा का महत्व : अमृता कुमारी 29
3. बच्चें और उनका समाजीकरण : आशीष अम्बर 31
4. अंतरिक्ष यात्री, शुभांशु शुक्ला की सफल वापसी : डॉ० अजय कुमार 33
5. पटना का गोलघर-एक ऐतिहासिक स्मारक : हर्ष नारायण दास 34
6. शिक्षा में मातृभाषा की उपयोगिता : अमरनाथ त्रिवेदी 36
7. अंग्रेजी भाषा में शिक्षण की सार्थकता : डॉ स्नेहलता द्विवेदी आर्या 37
8. सुंदर लिखावट कला या विज्ञान : अरविंद कुमार 38

स्वानुभव

1. मैं शिक्षक कब बना ? : राकेश कुमार 40
2. सम्मानों का गोरखधंधा : स्वराक्षी स्वरा 41
3. साहसी अनीश : सुमोना रिंकू घोष 42

इस अंक में...

4. मीरा की चुप्पी : मो.जाहिद हुसैन 44

5. छात्रों द्वारा शिक्षक का अनुकरण : नेहा कुमारी 45

6. कुछ रिश्ते शब्दों से परे होतें हैं : चन्दन कुमार उर्फ मनीष अग्रवाल 46

दिवस विशेष

1. राष्ट्रीय युवा दिवस : जागृत युवा, सशक्त राष्ट्र : ओम प्रकाश 49

2. Dr. Sarvepalli Radhakrishnan : Ashish Kumar Pathak 51

3. कीमती उपहार (शिक्षक दिवस) : लवली कुमारी 52

4. शिक्षक का महत्व : मनु कुमारी 53

5. शिक्षक वह है जो मस्तिष्क के बंद दरवाजे को खोल दे : गिरीन्द्र मोहन झा 54

6. राजा राममोहन राय : आधुनिक भारत के अग्रदूत : सुरेश कुमार गौरव 55

7. स्मरण छठ घाट की : अरविंद कुमार 56

8. प्रथम भारतीय महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले : हर्ष नारायण दास 57

9. विश्वभाषा बनने की ओर हिंदी की यात्रा : आस्था दीपाली 58

10. हिंदी प्रेम : रूचिका 60

पथ की स्मृतियाँ

1. यात्रा लिंगराज मंदिर की : अजय कुमार मीत 62

2. पुरी यात्राः एक यादगार अनुभव : मारुत नंदन पांडे 64

टीओबी स्थापना दिवस विशेष

1. टीचर्स ऑफ़ बिहार के 7वें स्थापना दिवस पर शिक्षाप्रेमियों के नाम पत्र : ओम प्रकाश 66

लेखक : अपने शब्दों में

गेहूँ बनाम गुलाब

- रामवृक्ष बेनीपुरी

(23 दिसम्बर 1899-6 सितम्बर 1968)

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते हैं। एक से शरीर की पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मानस तृप्त होता है।
गेहूँ बड़ा या गुलाब? हम क्या चाहते हैं- पुष्ट शरीर या तृप्त मानस? या पुष्ट शरीर पर तृप्त मानस!

जब मानव पृथ्वी पर आया, भूख लेकर। क्षुधा, क्षुधा; पिपासा, पिपासा। क्या खाए, क्या पीए? माँ के स्तनों को निचोड़ा; वृक्षों को झकझोरा; कीट-पतंग, पशु-पक्षी- कुछ न छूट पाए उससे!

गेहूँ-उसकी भूख का क़ाफिला आज गेहूँ पर टूट पड़ा है! गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ!

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग़ उजाड़े जा रहे हैं- गेहूँ के लिए!

बेचारा गुलाब-भरी जवानी में कहीं सिसकियाँ ले रहा है! शरीर की आवश्यकता ने मानसिक प्रवृत्तियों को कहीं कोने में डाल रखा है, दबा रखा है।

किंतु; चाहे कच्चा चरे, या पकाकर खाए- गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अंतर? मानव को मानव बनाया गुलाब ने! मानव, मानव तब बना, जब उसने शरीर की आवश्यकताओं पर मानसिक वृत्तियों को तरजीह दी!

यही नहीं; जब उसके पेट में भूख खाँव-खाँव कर रही थी, तब भी उसकी आँखें गुलाब पर टँगी थी, टँकी थी।

उसका प्रथम संगीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँ को ऊखल और चक्की में कूट-पीस रही थीं। पशुओं को मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ। उसकी खाल का बनाया ढोल और उनकी सींग का बनायी तुरही। मछली मारने के लिए जब वह अपनी नाव में पतवार का पंख लगाकर जल पर उड़ा जा रहा था, तब उसके छप-छप में उसने ताल पाया, तराने छोड़े! बाँस से उसने लाठी ही नहीं बनाई, बंसी भी बजाई!

रात का काला घुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह उच्छ्वसित हुआ सिर्फ़ इसलिए नहीं कि अब पेट-पूजा की समिधा जुटाने में उसे सहूलियत मिलेगी; बल्कि वह आनंदविभोर हुआ ऊषा की लालिमा से, उगते सूरज की शनैः शनैः प्रस्फुटित होने वाली सुनहली किरणों से, पृथ्वी पर चमचम करते लक्ष-लक्ष ओस कणों से! आसमान में जब बादल उमड़े, तब उनमें अपनी कृषि का आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ; उनके सौंदर्य-बोध ने उसके मन-मोर को नाच उठने के लिए लाचार किया; इंद्रधनुष ने उसके हृदय को भी इंद्रधनुषी रंगों में रंग दिया!

मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानांतर रेखा में नहीं हैं! जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

गेहूँ की आवश्यकता उसे है। किंतु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की! उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे है!

जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानंद रहा!

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था। उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

उसका साँवला दिन में गाय चराता था, रात में रास रचाता था।

पृथ्वी पर चलता हुआ, वह आकाश को नहीं भूला था और जब आकाश पर उसकी नज़रें गड़ी थीं, उसे याद था कि उसके पैर मिट्टी पर हैं!

किंतु धीरे-धीरे यह संतुलन टूटा।

अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड्डी तोड़ने वाले, थकाने वाले, उबाने वाले, नारकीय यंत्रणाएँ देने वाले श्रम का- वह श्रम, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शांत न कर सके।

और, गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का- भ्रष्टाचार का, गंदगी और गलीज़ का! वह विलासिता जो-शरीर को नष्ट करती है और मानस को भी।

अब उसके साँवले ने हाथ में शंख और चक्र लिए। नतीजा - महाभारत और यदुवंशियों का सर्वनाश !

वह परंपरा चली आ रही है। आज चारों ओर महाभारत है, गृहयुद्ध है, सर्वनाश है, महानाश है!

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में - दोनों अपने-अपने पालन-कर्ताओं के भाग्य पर, दुर्भाग्य पर !

चलो, पीछे मुड़ो। गेहूँ और गुलाब में हम एक बार फिर सम-तुलन स्थापित करें।

किंतु मानव क्या पीछे मुड़ा है; मुड़ सकता है?
यह महायात्री चलता रहा है, चलता रहेगा !
और क्या नवीन सम-तुलन चिरस्थायी हो सकेगा? क्या इतिहास फिर दुहराकर नहीं रहेगा?
नहीं, मानव को पीछे मोड़ने की चेष्टा न करो।
अब गुलाब और गेहूँ में फिर सम-तुलन लाने की चेष्टा में सिर

गेहूँ बनाम गुलाब

- रामवृक्ष बेनीपुरी

(23 दिसम्बर 1899-6 सितम्बर 1968)

खपाने की आवश्यकता नहीं।
अब गुलाब गेहूँ पर विजय प्राप्त करे!

गेहूँ पर गुलाब की विजय-चिर विजय! अब नए मानव की यह नई आकांक्षा हो!

क्या यह संभव है?

बिलकुल सोलह आने संभव है !

विज्ञान ने बता दिया है- यह गेहूँ क्या है। और उसने यह भी जता दिया है कि मानव में यह चिर-वुभुक्षा क्यों है। गेहूँ का गेहुँत्व क्या है, हम जान गए हैं। यह गेहुँत्व उसमें आता कहाँ से है, हमसे यह भी छिपा नहीं है।

पृथ्वी और आकाश के कुछ तत्व एक विशेष प्रतिक्रिया के पौदों की बालियों में संगृहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं। उन्हीं तत्वों की कमी हमारे शरीर में भूख नाम पाती है !

क्यों पृथ्वी की कुड़ाई, जुताई, गुड़ाई! हम पृथ्वी और आकाश के नीचे इन तत्वों को क्यों न ग्रहण करें?

यह तो अनहोनी बात–युटोपिया, युटोपिया!

हाँ, यह अनहोनी बात, युटोपिया तब तक बनी रहेगी, जब तक मानव संहार-कांड के लिए ही आकाश-पाताल एक करता रहेगा। ज्यों ही उसने जीवन की समस्याओं पर ध्यान दिया, यह बात हस्तामलकवत् सिद्ध होकर रहेगी !

और; विज्ञान को इस ओर आना है; नहीं तो मानव का क्या, सर्व ब्रह्मांड का संहार निश्चित है !

विज्ञान धीरे-धीरे इस ओर भी कदम बढ़ा रहा है !
कम से कम इतना तो अवश्य ही कर देगा कि गेहूँ इतना पैदा हो कि जीवन की परमावश्यक वस्तुएँ हवा, पानी की तरह- इफरात हो जायँ। बीज, खाद, सिंचाई, जुताई के ऐसे तरीके और किस्म आदि तो निकलते ही जा रहे हैं जो गेहूँ की समस्या को हल कर दें!

प्रचुरता-शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले साधनों की प्रचुरता-की ओर आज का मानव प्रभावित हो रहा है !

प्रचुरता?-एक प्रश्न चिह्न!
क्या प्रचुरता मानव को सुख और शांति दे सकती है?
'हमारा सोने का हिंदोस्तान'–यह गीत गाइए, किंतु यह न भूलिए कि यहाँ एक सोने की नगरी थी, जिसमें राक्षसता निवास करती थी!
राक्षसता-जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे; जो छह महीने सोती थी, न जिसे दूसरों की बहु-बेटियों को उड़ा ले जाने में तनिक भी झिझक नहीं थी।

गेहूँ बड़ा प्रबल है- वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शांत कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जाग्रत कर बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।

तो, प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय?
अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज का मनोविज्ञान दो उपाय बताता है- इंद्रियों के संयमन की ओर वृत्तियों को उर्ध्वगामी करने की!

संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आए हैं। किंतु, इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने हैं- बड़े-बड़े तपस्वियों की लंबी-लंबी तपस्याएँ एक रंभा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुस्कान पर स्खलित हो गईं!

आज भी देखिए। गाँधीजी के तीस वर्ष के उपदेशों और आदेशों पर चलनेवाले हम तपस्वी किस तरह दिन-दिन नीचे गिरते जा रहे हैं।

इसलिए उपाय एकमात्र है-वृत्तियों को उर्ध्वगामी करना !
कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठाकर सूक्ष्म भावनाओं की ओर प्रवृत्त कीजिए।

शरीर पर मानस की पूर्ण प्रभुता स्थापित हो- गेहूँ पर गुलाब की!

गेहूँ के बाद गुलाब–बीच में कोई दूसरा टिकाव नहीं, ठहराव नहीं!

गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है। वह दुनिया जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छाई है।

जो आर्थिक रूप से रक्त पीती रही, राजनीतिक रूप में रक्त बहाती रही!

अब दुनिया आने वाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे। गुलाब की दुनिया-मानस का संसार-सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानव-जगत् का नया लोक बसाएँगे?

जब गेहूँ से हमारा पिण्ड छूट जाएगा और हम गुलाब की दुनिया में स्वच्छंद विहार करेंगे!
गुलाब की दुनिया-रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया!
भौंरे नाच रहे, गूँज रहे; फुल सूँघनी फुदक रही, चहक रही!
नृत्य, गीत–आनंद, उछाह!

गेहूँ बनाम गुलाब

- रामवृक्ष बेनीपुरी

(23 दिसम्बर 1899-6 सितम्बर 1968)

कहीं गंदगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं, आंगन में गुलाब, खेतों में गुलाब, गालों पर गुलाब खिल रहे; आँखों से गुलाब झाँक रहा!

जब सारा मानव-जीवन रंगमय, सुगंधमय, नृत्यमय, गीतमय बन जायगा!

वह दिन कब आएगा!

वह आ रहा है–क्या आप देख नहीं रहे हैं ! कैसी आँखें हैं आपकी। शायद उन पर गेहूँ का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे को हटाइए और देखिए वह अलौकिक स्वर्गिक दृश्य इसी लोक में, अपनी इस मिट्टी की पृथ्वी पर ही!

शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर!

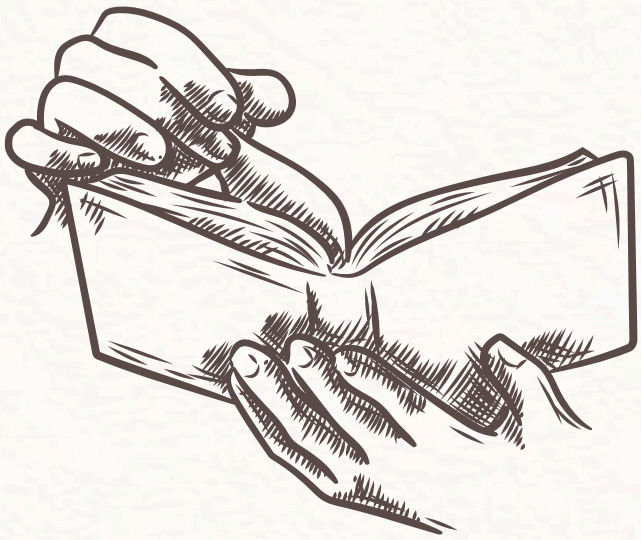

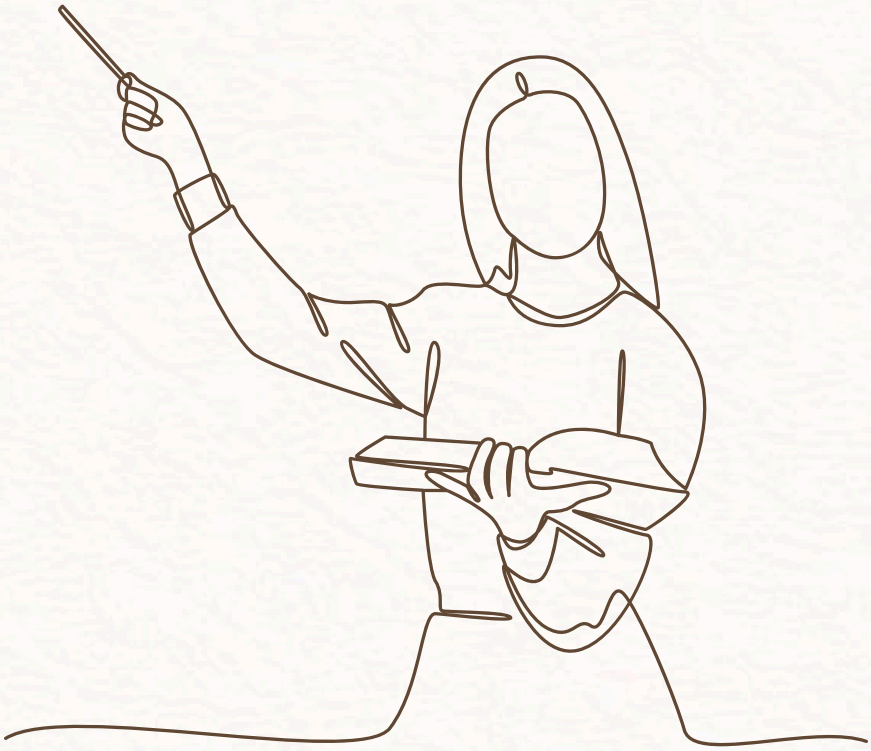

मूल्यों की पाठशाला

बचपन और उसकी यादें

- रूचिका

राजकीय उत्क्रमित मध्य विद्यालय तेनुआ, गुठनी, सिवान बिहार

बचपन और उसकी यादें जब भी जेहन में आ जाती हैं तो होठों पर बरबस ही मुस्कान चली आती हैं।
बचपन के दिनों में गर्मी की छुट्टियों का वर्षभर बेसब्री से इंतजार रहता था। हालाँकि आज की तरह गर्मी की छुट्टियों में न कोई समर कैम्प लगता, न कोई हिल स्टेशन जाने का मौका मिलता मगर जो भी था वो दिन बड़े सुहाने थे जो जिंदगी के पन्नों पर खूबसूरती के साथ दर्ज हो गए हैं।

गर्मी की छुट्टियों में रूटीन से हटकर दादी के गाँव हम सब जाते थे जहाँ सारे छोटे बड़े कजिन इकट्ठे होते थे फिर शुरू होता था हमारा धमाल, सारा दिन खेल कूद मस्ती, बगीचे में दिन गुजारना, कच्चे-पक्के आम खाना।

आज भले घर में आम के ढेर हों मगर खाने में वो आनन्द कहाँ, जो आनन्द सुबह-सुबह बगीचे में पहुँचकर रात भर में पेड़ से गिरे पके आम को चुनकर खाने में आता था।

एक अनार सौ बीमार वाली कहावत भी वहाँ चरितार्थ होती थी जब एक गिरे हुए आम को लपक कर उठाने के लिए सब मिलकर दौड़ लगाते और जिसे मिल जाता वह जो जीता वही सिकन्दर की तरह व्यवहार करता।

मुझे आज भी याद है हमारे बगीचे के बगल में एक पड़ोसी के दो पेड़ थे, खूब विशालकाय वह पेड़, आम से लदी हुई उनकी डालियाँ झुकी रहती थी।

उसकी रखवाली करने वाले एक बुजुर्ग वही पर सारा दिन लेटे रहते। मजाल जो कोई उनके पेड़ का एक भी आम उठा ले।

लेकिन हाँ, जब कभी हम बच्चे वहाँ जाते तो पानी से भरी हुई बाल्टी में 40-50 आम डालकर वह बाल्टी हमारे सामने कर देते और बोलते सारे आम खत्म कर दो।

अहा! क्या वो भी दिन थे, आम का वह स्वाद आज भी जिह्वा पर बरक़रार है।अब ना वह पेड़ है,ना ही वैसे बुजुर्ग और ना ही बच्चे जो गर्मी की छुट्टियों में गाँव की सैर को जाते हैं।

आम की बात जब चल पड़ी है तो एक घटना याद आती है जो अविस्मरणीय है। जून का महीना और गर्मी चरम पर थी। कड़क धूप और लू से सबकी हालत खराब थी। मगर हम बच्चों को धूप और गर्मी रोक सके। ऐसा कभी हो सकता था भला।
हम तकरीबन 10-15 बच्चों की टोली पहुँच गयें बगीचे में।
बगीचे में पूरा सन्नाटा था,बस पछुआ हवा का शोर सुनाई दे रहा था। हम बच्चे आम के पेड़ पर चढ़कर आम तोड़ने लगे, हम सब ऐसे आम तोड़ रहे थे जैसे बंदरों का झुंड बगीचे में घुस गया हो।

जिसके हाथ में जो भी आम आता वह उसे तोड़ लेता। चाहे वह कच्चा हो, पका हो, छोटा हो या बड़ा।
इस तरह लगभग एक बोरी आम हमलोगों ने मिलकर तोड़ लिया। अब समस्या यह थी कि इस आम को रखा कहाँ जाएगा। घरवालों को पता चलता तो बहुत मार पड़ती।

फिर हमलोगों ने बगीचे में ही झोपड़ी के पीछे पत्तों में छुपाकर आम रख दिया और तय हुआ कि यह बिल्कुल गुप्त रखेंगे। सब जब एक साथ बगीचे में आएंगे तभी कोई आम को हाथ लगाएगा।
ऐसा कहकर दो-दो, चार-चार आम खाकर हम सभी घर आ गए।

फिर किसी कारणवश हम दो दिन तक बगीचे नही जा पाएं तीसरे दिन जब बगीचा पहुँचे तो दौड़कर अपने आम के बोरे को देखने गए।
पर यह क्या, आम नदारद। सब एक दूसरे का मुँह देखने लगें। आम गुम हो गया या किसी ने ले लिया ये किसी से कह भी नही सकते थे।

लेकिन हाँ, यह सबक जरूर मिल गया कि कभी चोरी नहीं करना चाहिए।

सुनीता का त्याग

- लवली कुमारी

उत्क्रमित मध्य विद्यालय अनूपनगर, बारसोई, कटिहार

खट-खट की आवाज सुन कर सुनीता ने कहा, "नैना देखो तो दरवाजा पर कोई आया है।"
"मां, पार्सल वाले भैया हैं", सुनीता आश्चर्य से बोली।
"पार्सल वाले क्यों?"
"पता नहीं मां" – नैना ने कहा।
"क्या हुआ भाई साहब"- सुनीता ने कहा।
"सुनीता देवी का पार्सल है।"
पर मैंने तो कोई पार्सल आर्डर नहीं किया।नैना दरवाजे के पास खड़ी मंद -मंद मुस्कुरा रही थी। मां देखो तो सही पार्सल तुम्हारे नाम से है तो रख लो ना बेटी की बात सुन सुनीता ने पार्सल रख लिया।
"क्या है देखो तो इसमें?" सुनीता ने जैसे ही पार्सल खोला तो अवाक हो गई।
उसमें बहुत सुंदर-सा हारमोनियम रखा हुआ था और एक प्यारा सा कार्ड जिसमें हैप्पी मदर्स डे लिखा हुआ था। मां आपने मेरे लिए अपने जीवन की सभी खुशियां त्याग दी आपको गाने का शौक था आपने अपनी हारमोनियम को मेरी देखभाल के लिए बेच दिया था ना।
मां मेरी पूरी बात सुने ही गुस्से से बोली इतना महंगा हारमोनियम तुमने कहां से लाया। तभी घर पर नैना की दोस्त आई और उसने कहा कि चाची जी नैना स्कूल के बाद ट्यूशन पढ़ा कर अपने पैसे जमा करके उसी से यह हारमोनियम मंगवाया है।

सुनीता की आंखें डबडबा गई उसने नैना को पकड़ कर गले लगा लिया।
नैना भी खुशी के आंसू पोछते हुए मां से पूछा- "आपको यह पसंद आई ना मां।"
मां ने कहा- "धन्य हूं मैं तुम्हारे जैसी बेटी पाकर।"
मैं भी बहुत खुशकिस्मत हूं कि भगवान ने मुझे आप जैसी मां उपहार में दिया। नैना जब दो महीने की थी तभी उसकी मां गुजर गई थी, उसके पिता ने दूसरी शादी कर ली पर उसकी सौतेली मां उससे बहुत प्यार करती थी। उसने नैना को कभी भी सौतेला बच्चा नहीं समझा। हमेशा उसे अपनी बेटी की तरह प्यार किया। फिर 2 साल बाद नैना के पिताजी भी गुजर गए अब तो जैसे मानो पहाड़ जैसी जिंदगी गुजारना मुश्किल था सुनीता के लिए।

सुनीता की मां ने कहा इसे अनाथ आश्रम छोड़ आओ मैं तुम्हारी दूसरी शादी करवा देती हूं। सुनीता गुस्से से बोली मां मैं इस बच्चे की खातिर अपने बच्चे नहीं लिए यह बच्ची मेरे पति की निशानी है और आप इसे छोड़ देने को कहती हैं। मुझे नहीं रखना है तो मत रखो मैं अपनी बेटी की परवरिश अच्छी तरह से कर सकती हूं। सुनीता के पास एक हारमोनियम था जिसे नैना की लालन- पालन की खातिर बेच दिया। उनसे जो पैसे हुए उसे वह छोटा-मोटा ब्यूटी पार्लर खोल ली जिससे किसी तरह से खुद का और अपनी बेटी का पेट भरने लगी। धीरे-धीरे उसके रोजगार में तरक्की हुई। वह बहुत मेहनत करके नैना को पढ़ाने लगी। नैना अभी उच्च- माध्यमिक में बहुत अच्छे अंक प्राप्त कर एक अच्छे से कॉलेज में दाखिला प्राप्त की थी। तभी ही वह ट्यूशन भी पढ़ने लगी। इसलिए क्योंकि नैना ने एक दिन अपनी मां को गाना गाते हुए सुना था। वह समझ गई कि मेरी मां गाना बहुत अच्छा गाती थी और उन्हें हारमोनियम पर गाने का बहुत शौक था उसने अपनी मां की तस्वीर देखी थी। तभी उसने ठान लिया मुझे अपनी मां को यह हारमोनियम उपहार में देना है। आज मदर्स डे से तो अच्छा अवसर तो और कोई था ही नहीं दोनों मां-बेटी गले मिलकर खुशी के आंसू निकालते रहे।
सचमुच मां तो मां होती है जो अपने बच्चों को निश्चल, निस्वार्थ प्रेम और ज्ञान देती रहती है।

मास्टर साहब

- डॉ स्नेहलता द्विवेदी आर्या

उत्क्रमित कन्या मध्य विद्यालय शरीफगंज, कटिहार

रमेश और सुरेश दोस्त है। दोनो ने साथ में पढ़ाई की और एक साथ पले बढ़े। दोनों आज भी सम्पर्क में हैं,और परिवार से परिपूर्ण हैं सुखी है लेकिन दोनोंअलग अलग परिस्थितियों से आगे बढे हैं।

रमेश एक धनाढ्य परिवार का इकलौता पुत्र था बचपन में उसे किसी प्रकार का अभाव नहीं था जबकि सुरेश एक किसान का बेटा जिसे मुश्किल से माड़-भात मिल पाता था। दोनों एक ही गाँव के एक विद्यालय में पढ़ते थे, उन दिनों अँग्रेजी माध्यम वाले विद्यालयों का अस्तित्व ग्रामीण परिवेश में नही था अतः धन की स्थिति में अपार अन्तर होने के बावजूद भी दोनों एक ही विद्यालय में पढ़ते थे।

रमेश संसाधन की बहुलता में आसान जीवन का आदी हो गए थे जबकि सुरेश संघर्ष कर आगे बढ़े। संघर्ष के दौरान सुरेश को अपनी माँ का संबल था। सुरेश की माँ सावित्री देवी एक धार्मिक औऱ संवेदनशील महिला थीं जबकि रमेश की माँ सामान्य महिला थीं और रमेश के पिता में धन के कारण होने वाले दुर्गुण थे, रमेश जैसे जैसे बड़े हुए उनमें भी धन जनित दुर्गुण आने लगे और व्यभिचारी होने लगे।

विद्यालय में एक शिक्षक थे; भागवत मास्टर साहब, नैतिकता की प्रतिमूर्ति और छात्रों के प्रति संवेदनशील। सुरेश और रमेश आज भी जब मिलते हैं या बात करते हैं तो भागवत मास्टर साहब के बारे में निश्चित तौर पर चर्चा होती है और दोनो उनकी प्रशंसा करते है। रमेश का तो मानना है कि यदि मास्टर साहब ने समझाया नहीं होता तो आज रमेश सलाखों के पीछे होता, सुरेश भी अपने बुरे दिनों को याद कर अश्रुसिक्त नयनो से मास्टर साहाब को याद करते हैं।

उन दिनों के बारे में याद करते हुए सुरेश कहते हैं कि गुरूजी हमारे संबल थे और भीषण कष्ट में भी इन्होंने धैर्य, संस्कार और नैतिकता का जो पाठ पढ़ाया उसने गलत रास्ते पर जाने से उन्हें कैसे रोका। ऐसी बात नहीं है कि जीवन में लालच या नियम तोड़ने का मौका नहीं मिला बल्कि उन नाज़ुक पलों में गुरुजी की शिक्षा ने थाम लिया।

रमेश भी याद करके भावुक हो जाते हैं लेकिन उनकी कहानी कुछ अलग है वो याद करते हैं कि किस प्रकार वो गलत रास्ते से वापस हुए। यह कहानी चारित्रिक दोष तक जाती है और वापस होने में गुरुजी की नैतिक शिक्षा को वो मुख्य कारण मानते हैं। लेकिन दोनों के लिए विचारणीय प्रश्न है कि यह तो गुरुजी का व्यक्तित्व था जिसने उन दोनों को बिगड़ने से बचाया, लेकिन क्या मुख्य पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा का होना अनिवार्य नहीं होना चाहिए? निश्चित रूप से समान्य विद्यार्थियों में नैतिकता का बीज पाठ्यक्रम के माध्यम से दिया जाना चाहिए।

वस्तुतः पाठ्यक्रम की अधिकतर पढ़ाई का समान्य जीवन में उतना उपयोग नहीं है जितना नैतिक शिक्षा का... दोनों का निष्कर्ष एक ही है कि नैतिकता जीवन और नागरिक कर्तव्य का मूलभूत आधार है, इसके बिना शिक्षा अधूरी और व्यक्ति निर्माण एकाकी है।

दादी माँ की सीख

- गिरिधर कुमार

उ० म० वि० जियामारी, अमदाबाद, कटिहार

गर्मी की छुट्टी में इस बार भी सभी बच्चे अपने गाँव आये थे। अनु, तनु, मंगल, सोनू, सबके सब। अपने गाँव, अपनी दादी माँ के गाँव।

मजे की बात। गाँव का नाम था बसन्तपुर और दादी माँ का नाम बसन्ती! बसन्ती देवी।

यह गाँव भी प्यारा-सा। दादी भी प्यारी-सी। सबको प्यार करने वाली। सबकी दुलारी। सभी बच्चे उन्हें हमेशा घेरे रहते थे।

बच्चे शरारती भी कम न थे। खेल-खेल में एक-दूसरे से भिड़ जाते। कभी-कभी झगड़े, मारपीट तक की नौबत हो जाती थी।

आज सुबह से ही बच्चों ने शोर मचा रखा था। कभी छत पर, कभी बरामदे में, कभी बगीचे में उछल-कूद मचा रहे थे।

तभी मंगल ने तनु को धकेल दिया। उधर अनु और सोनू आपस में तू-तू, मैं-मैं कर रहे थे।

'अरे, देखो, दादी माँ आ रही है। आज मैं सभी की शिकायत करूँगी। दादी सभी को डाँटेगी। सभी को मारेगी!'

बातूनी तनु की बात झूठी न थी। दादी माँ सचमुच आँगन से निकलकर बच्चों की तरफ आ रही थी।

पहले तो सभी बच्चे सहम गए। फिर सभी ने एक-दूसरे की गलती गिनानी शुरू कर दी। मगर दादी ने किसी को कुछ न कहा। न डाँट लगाई। न फटकार।

'देखो, मैं तुम सबको अच्छी लगती हूँ न!'

'हाँ... दादी माँ!' सभी ने एक साथ कहा।

'वह इसलिए बच्चों, कि मैं तुम सभी से प्यार करती हूँ। किसी का दिल नहीं दुखाती। न कुछ ऐसा करना चाहती हूँ कि मेरे व्यवहार से किसी को पीड़ा पहुँचे... समझ रहे हो न मेरी बात?'

'हाँ...' सभी ने सिर हिलाया।

'तो मेरे बच्चे! यही तो असली की पढ़ाई है। अच्छे बनो। नेक बनो। सभी से प्यार करो। सबके प्यारे बनो।...'

फिर दादी माँ ने सभी को प्यार से अपने साथ बिठाया और अच्छी-अच्छी चीजें खाने के लिए दीं।

सभी खुश थे। कोई फल खा रहा था। कोई आलू के चिप्स और मंगल तो रेबड़ी पीने में मगन था!

बच्चों के खुशियों की कोई सीमा न थी। वह सचमुच दादी माँ की बात को समझने लगे थे।

हमारा व्यक्तित्व

- राम किशोर पाठक

प्राथमिक विद्यालय कालीगंज उत्तर टोला, बिहटा, पटना

बात आज से 27 वर्ष पूर्व की है। उस समय मोबाइल का नामोनिशान नहीं था। कम्प्यूटर की शुरुआत हो चुकी थी। मैं पटना के एक निजी उच्च विद्यालय में अंग्रेजी विषय का शिक्षण किया करता था। उस समय मेरे शिक्षण का तरीका शायद अधिक सख्त था। मैं गृहकार्य न करने, अनुपस्थित रहने, बाल या नाखून बढ़ाने अथवा अनेकानेक अनुशासनिक कार्यो के लिए दंड विधान तैयार कर दिया था। जिससे सभी शिक्षक और छात्र सुपरिचित थें। मैं अपना शिक्षण उसी विधान के साथ करता था। सभी बच्चों में मैं एक क्रूर अध्यापक के तौर पर जाना जाता था। जबकि कुछ शिक्षक बच्चों के काफी निकटस्थ थें। उनमें से एक शिक्षक विद्यालय संचालक सह निदेशक के अपने साले भी थें।

कुछ समय बाद समयाभाव के कारण मैं विद्यालय में त्याग पत्र दे दिया किन्तु वही पास के एक शिक्षण संस्थान में शाम को एक घंटा पढ़ाने जाया करता था। विद्यालय छोड़ने के २० दिन बाद ही पता चला कि अष्टम वर्ग का एक छात्र निदेशक महोदय के उसी साले को अपने वर्ग में ही अध्यापन करते समय पिटाई कर दी।

अगले दिन शाम के समय मैं नित्य की भाँति शिक्षण कार्य हेतु गया था। कक्षा संचालित होने में १५ मिनट शेष थें तो मैं बाहर सड़क पर ही टहल रहा था कि तभी वही लड़का आया और पैर छू लिया। मैंने आशीर्वाद कहा और वह ज्यों ही चलने लगा मुझे कल की सूचना याद आ गयी। मैं उससे पूछ बैठा, सुना है तुम आजकल रंगदार हो गया है, शिक्षक को भी पीट दिया। मैं नहीं समझता हूँ कि मुझसे ज्यादा आजतक किसी ने पिटाई की होगी, मुझपर हाथ भी तो उठाकर देखते। वह सिर झुकाए खड़ा था लेकिन उसने जो उत्तर दिया, उससे मैं निरुत्तर हो गया।

उसने कहा कि आप पढ़ाने के साथ जब पिटाई करते थें तो हम सबको अपनी गलती का एहसास होता था। आप में कोई खामियाँ दिखाई नहीं पड़ती थी। लेकिन वे कक्षा में आकर सिर्फ पुस्तक पढ़ देते हैं, मुझसे ही गुटखा मँगाते हैं और गुटखा खाकर वर्ग में आते हैं, हँसी ठिठोली भी करते हैं फिर उनकी पिटाई कैसे बर्दाश्त कर लें। मैंने उसे समझाया और मन लगाकर पढ़ने की हिदायत देते हुए जाने को कहा। वह एक अबोध बालक की तरह मेरे सामने से सिर झुकाए चला गया और मैं सोचता रहा कि क्या एक शिक्षक का व्यक्तित्व बच्चों के लिए इतना मायने रखता है। फिर समय हो गया और मैं शिक्षण करने चला गया।

नैतिक शिक्षा - नैतिक शिक्षा का विकास पुस्तकों, अथवा शिक्षक के द्वारा बताए गए बातों से ज्यादा शिक्षक के व्यवहार, गुण और आदर्श को देखकर बच्चे सीखते और आत्मसात करते हैं। एक शिक्षक के रूप में हमें सदा बच्चों के लिए आदर्श होना चाहिए।

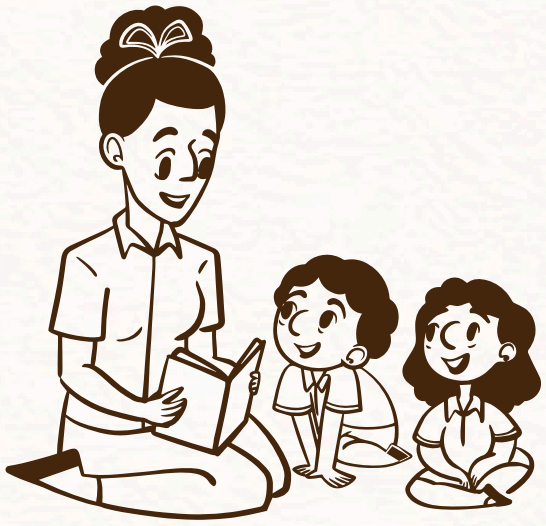

रजिया की शादी

- नीतू रानी

म० वि० सुरीगाँव, बायसी, पूर्णियाँ

जिया की माँ रजिया की शादी बारह वर्ष में करवा देना चाहती थी। यानी कि "बाल विवाह", क्योंकि अगर रजिया पंद्रह, सत्रह साल की हो जाएगी तो उसके लायक लड़का नहीं मिलेगा और आजकल जमाना बहुत खराब है और जमाना बदल भी गया है।

रजिया दो बहनें थी। रजिया और बजिया। रजिया बड़ी थी और बजिया छोटी। रजिया अभी पढ़ना चाहती थी।

रजिया की माँ बोली, "तुम कितना भी पढ़ लोगी, तुमको ससुराल में चूल्हा फूँकना हीं पड़ेगा" इसलिए पढ़कर क्या करोगी। रजिया माँ की बातें सुनकर चुप हो गई।

एक दिन रजिया के पापा रजिया के लिए लड़का देखने गए, लड़का पसंद हो गया यानी लड़का का घर-द्वार सुखी संपन्न था, लेकिन लड़के की उम्र लड़की से बीस वर्ष ज्यादा था।

रजिया की माँ बहुत गरीब थी। वह सोची लड़का सुखी संपन्न है थोड़ा उम्र हीं न ज्यादा है कोई बात नहीं मेरी बेटी कभी दुख नहीं काटेगी। रजिया जब शादी और लड़के की ज्यादा उम्र के बारे में अपनी बहन से सुनी, तब वह आवाक रह गई और सिसक- सिसक कर रोने लगी। रजिया की रोना देख उसकी छोटी बहन बोली, दीदी तुम चिंता मत करो मैं कोई उपाय सोचती हूँ।

दूसरे दिन शादी की महफ़िल सज रही थी कि अचानक बगल में आग लग गई, रजिया का भी घर जल सकता था। किसी ने तुरंत अग्निशामक पुलिस को सूचना दी। मौके पर पुलिस भी आ गई और घर जलने एवं परिवार को जलने से बचा लिया।

जब आगलगी समाप्त हो गई तब पुलिस ने रजिया की बहन बजिया से पूछी, "यहाँ किसलिए महफ़िल सजाया जा रहा है?"

रजिया की बहन बोली- "ये मेरी दीदी है, इसी की शादी है।"

पुलिस बोली ये तो अभी बहुत छोटी है। इसकी शादी इतने कम उम्र में कौन करा रहा है? पुलिस ने उनके माता-पिता से बातें की, माता-पिता को समझाया कि ये बाल विवाह कानूनी अपराध है आप दोनों पति-पत्नी को जेल भी हो सकती है।

पुलिस के कहने पर रजिया की शादी नहीं हुई। रजिया पुलिस अंकल को बहुत- बहुत धन्यवाद दी कि आज आपके कारण मैं जिंदगी और मौत से बच गई।

कोसी क्षेत्र

- नेहा कुमारी

रा. स. हरावत राज उच्च माध्यमिक विद्यालय, गणपतगंज, सुपौल

कोसी क्षेत्र में बच्चों में नशाखोरी एक गंभीर समस्या बनती जा रही है, जिससे नौनिहाल, जो भविष्य के कर्णधार हैं, नशे की गिरफ्त में आ रहे हैं। यह स्थिति न केवल व्यक्तिगत रूप से बच्चों के जीवन को प्रभावित करती है, बल्कि पूरे समाज के लिए एक चिंता का विषय है।

नशे की गिरफ्त में नौनिहाल:

कोसी क्षेत्र में, गरीबी, बेरोजगारी, और सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन के कारण, बच्चे आसानी से नशे की गिरफ्त में आ जाते हैं। शुरुआत में, वे उत्सुकतावश या दोस्तों के दबाव में नशा करना शुरू करते हैं, लेकिन धीरे-धीरे यह लत बन जाती है। शराब, गांजा, और अन्य नशीली दवाओं का सेवन बच्चों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित करता है।

नशे के कारण:

- *गरीबी और बेरोजगारी:*

गरीबी और बेरोजगारी के कारण, बच्चे अक्सर घर पर हीन भावना महसूस करते हैं और नशे की लत में पड़ जाते हैं।

- *सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन:*

कमजोर सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले परिवारों में, बच्चों को नशे से दूर रखने के लिए पर्याप्त सुविधाएं और जागरूकता की कमी होती है।

- *संगति का प्रभाव:*

गलत संगत में पड़कर, बच्चे नशे की लत में फंस जाते हैं।

नशे के प्रभाव:

- *शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव:*

नशे के सेवन से बच्चों के शारीरिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। इससे हृदय रोग, फेफड़ों की बीमारी, और लीवर की बीमारी जैसी गंभीर बीमारियां हो सकती हैं।

मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव:

नशे के सेवन से बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। इससे अवसाद, चिंता, और आत्महत्या जैसे मानसिक रोग हो सकते हैं।

सामाजिक प्रभाव:

नशे के सेवन से बच्चों का सामाजिक जीवन भी प्रभावित होता है। वे अपने परिवार और दोस्तों से दूर हो जाते हैं, और अपराधों में शामिल हो सकते हैं।

कोसी क्षेत्र में बच्चों में नशे की लत एक गंभीर समस्या है, जिससे निपटने के लिए तत्काल और प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। जागरूकता अभियान, शिक्षा का प्रसार, खेलकूद और मनोरंजन के अवसर, नशा मुक्ति केंद्र, और कठोर कानून, ये सभी उपाय बच्चों को नशे से बचाने और उनके भविष्य को सुरक्षित बनाने में मदद कर सकते।

नेकदिल राजा

- कंचन प्रभा

मध्य विद्यालय गौसाघाट, दरभंगा

एक गाँव में किशन नाम का एक लकड़हारा अपनी पत्नी के साथ रहता था। वह बहुत ही गरीब था। वह एक छोटी सी झोंपड़ी बना कर रहता था। वो इतना गरीब था कि झोंपड़ी में एक चटाई , एक मिट्टी का दीया, दो थाली और एक लोटा के अलावे कुछ भी नहीं था। उसकी पत्नी एक दो घर में बर्तन मांजती थी और किशन रोज सुबह जंगल में जा कर लकड़ी काटता फिर लकड़ियों को बाजार में बेचता और उससे जो पैसे मिलते उससे चुड़ा गुड़ इत्यादि ले कर घर आता और दोनों मिल कर भोजन करते इसी प्रकार उसकी रोजी रोटी चल रही थी।

एक रात दोनों चुड़ा गुड़ खा कर सोने की तैयारी कर ही रहे थे कि बाहर से किसी ने आवाज लगाई- "कोई है"
किशन झोंपड़ी से बाहर जा कर देखा तो एक बूढ़ा व्यक्ति कम्बल ओढ़े खड़ा था। उसकी लम्बी दाढ़ी थी आंखें सूजी हुई। पैरों में मिट्टी सना हुआ। हाथों में लाठी थी।
किशन उसे देख कर पुछा–आप कौन है?

उस बूढ़े व्यक्ति ने कहा– मेरा नाम मंगल है । मैं एक भिखारी हूँ। तीन दिनों से कुछ भी नहीं खाया है और ना पानी की एक भी बूँद मेरे मुख में गयी है। यहाँ से गुजर रहा था तो बड़ी थकान सी हुई और आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं हो रही इसलिये मैंने आपको आवाज दी। क्या आप मुझे आज की रात अपने घर में शरण देंगे?

सुन कर किशन बोला– हाँ हाँ क्यों नहीं अतिथि हमारे लिये भगवान होते हैं। आइये आइये अंदर आइये।
और किशन उस भिखारी को अंदर ले आया और पत्नी से पानी लाने को कहा।

पानी पीते ही जैसे उस भिखारी को जान में जान आ गई। फिर किशन की पत्नी ने कुछ चुड़ा और गुड़ ला कर उन्हें खाने को दिया। किशन अपने गमछे से उसे हवा देता रहा। खाने के बीच दोनों बाते कर रहे थे। भिखारी ने किशन की गरीबी की कहानी सुन कर बेहद भावुक हो गया और बोला– आप जैसे अच्छे इंसान की भगवान क्यों नहीं सुनता? आप यहाँ के राजा से क्यों ना मदद लेते हैं। वो बहुत अच्छे है सुना है वो अपनी जनता का बहुत ख्याल रखते हैं।

किशन उसकी बाते सुन कर बोला– राजा के दरबार में जाना आसान नहीं होता। हम जैसे लोगों को अंदर जाने कि अनुमति नहीं मिलती। सैनिक हमें बाहर से ही लौटा देंगे।
सुन कर भिखारी बोला – आप राजमहल जायें और राजमहल के बाहर जो सैनिक होगा उसे मेरा नाम बोलियेगा वो आपको अंदर जाने देगा। फिर आप राजा से अपनी समस्या बोल कर मदद मांग लीजियेगा।

किशन को उसकी बातें सुन कर आश्चर्य हुआ। जब इनकी इतनी पहचान बनी हुई है तो ये खुद क्यों नहीं राजा से मदद ले रहे? मन के दुविधा को दूर करने के लिये वो आखिर ये बात मंगल से पुछ ही लिया।
मंगल उसकी बाते सुन कर मुस्काया

"मैं किसके लिये काम करूँ? मेरा दुनिया में कोई नहीं। घूमते फिरते कोई दो रोटी दे देता है बस और मुझे क्या चाहिये और अब तो मेरे एक पैर कब्र में है। आपकी तो पत्नी है। पूरा जीवन बचा हुआ है।"
किशन ने कहा– ठीक है मैं कल ही राजमहल जाता हूँ।
बातचीत करते करते दोनों सो गये।

सुबह किशन की नींद खुली तो देखा भिखारी जा चुका था। फिर नित्य क्रिया करके वो राजमहल की ओर चल दिया। राजमहल के मुख्य द्वार पर खड़े सैनिक से किशन बोला, "नमस्कार मेरा नाम किशन है। मुझे मंगल ने भेजा है।"
सुन कर सैनिक उसे वहाँ रुकने को कह कर अंदर चला गया। थोड़ी देर बाद वो वापस आ कर बोला, "जाइये आपको महाराज ने बुलाया है।"
फिर एक दुसरा सैनिक किशन को दरबार तक ले कर गया।
दरबार में आ कर किशन ने महाराज को प्रणाम किया।
राजा ने कहा– "आओ किशन मैं तुम्हारा ही इन्तजार कर रहा था।"
"मेरा इन्तजार?" आश्चर्य से किशन बोला।
राजा– "हाँ मुझे तुम्हारा कर्ज चुकाना है ना"
किशन- "मेरा कर्ज?"
राजा– हाँ हाँ मैंने जो तुम्हारे घर भोजन किया पानी पिया और आराम किया था उसका कर्ज चुकाना है।
क्या? कल जो बुजुर्ग मेरे घर आये थे वो आप थे? किशन आश्चर्यचकित हुआ।

हाँ भई हाँ वो मैं ही था। मैं अपने जनता का हाल चाल जानने खुद ही रात को वेश बदल कर निकला करता हूँ और रोज किसी एक परिवार के दुख दूर करने की कोशिश करता हूँ।
मैं चाहता हूँ कि मेरे राज्य की जनता खुशहाल रहे। कोई भूखा ना सोये। कोई भीख ना मांगे।

नेकदिल राजा

- कंचन प्रभा

राजा ने किशन को बताया।
किशन के मुख से अनायास ही निकल गया महाराज की जय हो महाराज की जय हो।
राजा ने किशन को अपना दरबारी बना लिया साथ ही उसकी पत्नी को भी राजमहल के रसोई में काम मिल गया।
अब खुशी खुशी किशन का परिवार चलने लगा।

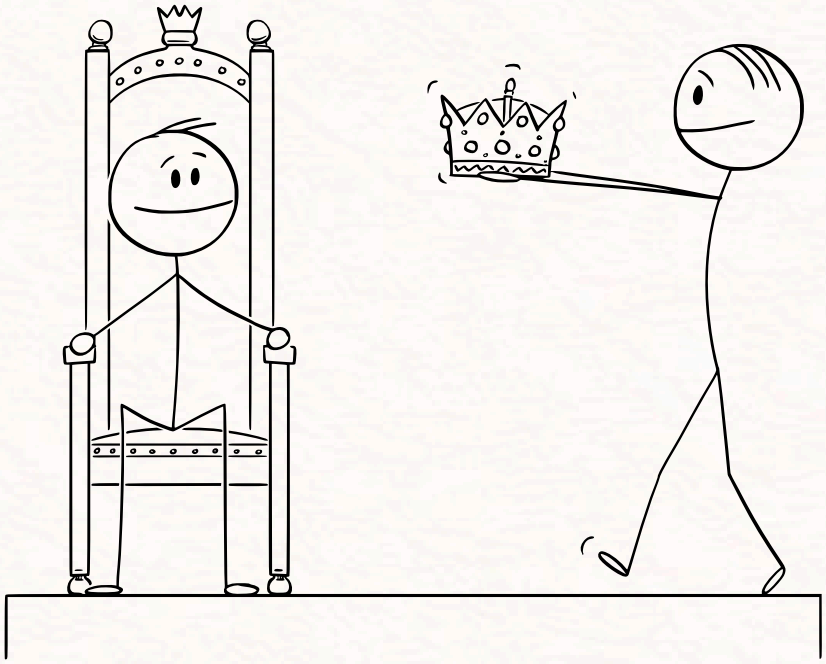

तेते पाँव पसारिए

- मनु कुमारी

मध्य विद्यालय सुरीगाँव, बायसी, पूर्णियाँ

मनुष्य को अपने सामर्थ्य के अनुसार हीं जीवन में खर्च करना चाहिए। ऐसा नहीं कि आमदनी अठन्नी हो और हम खर्चा रूपया करें। अपनी आमदनी के हिसाब से हीं अपना शौक पूरा करना चाहिए। एक नोट बुक में अपनी छोटी -मोटी वस्तुओं से लेकर हर बड़ी वस्तुओं का हिसाब-किताब रखें और देखें कि ये हमारी आय के अनुकूल है या नहीं। जरूरत के अनुसार आप बढ़ा और घटा सकते हैं। नहीं तो जो बेहिसाब चलते हैं उनके पास कर्ज़े लेने, भीख माँगने की नौबत आ जाती है और परिवार में चैन – सुख सब खत्म हो जाता है।

वे हमेशा यही कहते रहते हैं कि "जब तक जिओ सुख से जिओ, ऋण लेकर घी पियो"। ऐसे में बच्चे नहीं देखते हैं कि हमारे माता-पिता मजदूरी करते हैं, दूसरे के घर काम करते हैं और हम उसका नाजायज फायदा उठाते हैं। वो फैशन वाले कपड़े पहनते हैं, हाई-फाई रहते हैं उन्हें अन्दाजा नहीं होता कि जिन पैसों पर हम ऐश कर रहे वह कितना मुश्किल से आता है। इस तरह माँ- बाप के पैसों को उड़ाकर बच्चे नालायक और निकम्मे बन जाते हैं। वह पैसे की सही उपयोगिता को नहीं समझ पाते।

वहीं दूसरी ओर कुछ बच्चे अपने माता-पिता की मेहनत को समझते हुए हिसाब से चलते हैं, और अपनी आवश्यकतानुसार रूपयों का सही उपयोग करते हैं, वही बच्चे जीवन में आगे बढ़ते हैं और कुछ बनते हैं।

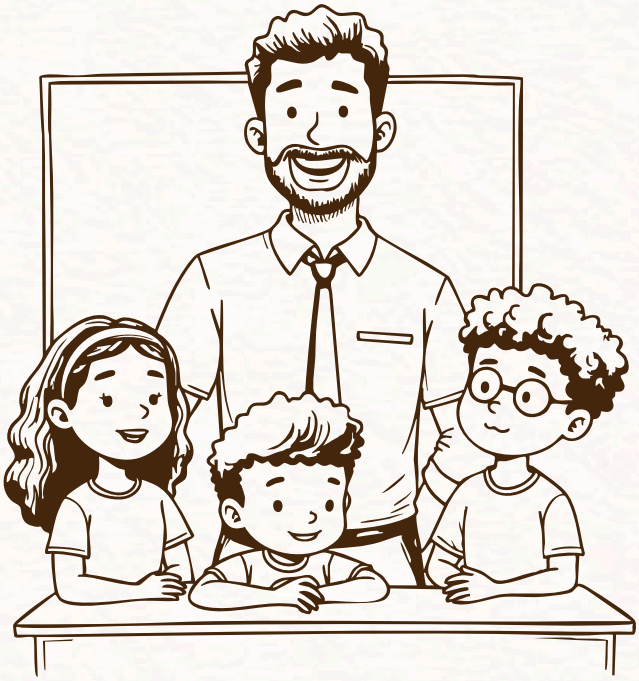

हमारे बुजुर्ग कहते हैं कि- "चाएल चलि सादा जे निमहे बाप दादा"!

मतलब अपना चलन सादगी से इस तरह चलो जो बाप से दादा बनने तक निभा सको। जीवन सादा हो और विचार ऊँचे होने चाहिए। यही जीवन की असली शिक्षा है।

इसलिए तो कहा गया है- "अपनी पहुँच बिचारि कै करतब करिये ठौर, तेते पाँव पसारिए जेती लम्बी सौर।"

अपने सामर्थ्य की सीमा जानकर हीं कोई कर्म-धर्म करना चाहिए। जितनी बड़ी चादर हो हमें उतने हीं दूर पैर फैलाना चाहिए।

अजनबी से अपनापन

- रिन्जु कुमारी

प्राथमिक विद्यालय पासवान टोला किरकिचिया, फॉरबीसगंज , अररिया

रवि दिल्ली जाने के लिए रेलवे स्टेशन पर खड़ा था। भीड़ इतनी थी कि पैर रखने की जगह नहीं मिल रही थी। अचानक उसका पैर फिसला और वह गिरने ही वाला था कि एक युवक ने हाथ पकड़कर उसे संभाल लिया। रवि ने धन्यवाद दिया और दोनों बात करने लगे।

युवक का नाम था अजय। बातचीत में पता चला कि दोनों एक ही गाँव के आस-पास के रहने वाले हैं, लेकिन कभी मिले नहीं थे। ट्रेन में सफर करते हुए दोनों ने एक-दूसरे की परेशानियाँ, सपने और परिवार की बातें साझा कीं।

यात्रा खत्म होते-होते रवि और अजय को लगा कि वे बरसों से एक-दूसरे को जानते हों। उसी दिन से दोनों ने तय किया कि वे एक-दूसरे की हर परिस्थिति में मदद करेंगे।

समय बीता। एक दिन रवि बीमार पड़ गया और उसका परिवार परेशान हो गया। सबसे पहले मदद को अजय ही पहुँचा। दूसरी ओर जब अजय का व्यापार डूबने लगा तो रवि ने उसे फिर से खड़ा होने में मदद की।

धीरे-धीरे उनका रिश्ता इतना गहरा हो गया कि लोग कहते- "ये दोनों दोस्त नहीं, बल्कि भाई हैं।"

नैतिक शिक्षा: सच्ची दोस्ती खून के रिश्तों से भी बड़ी होती है। जीवन में कभी भी, कहीं भी कोई मिल सकता है और वही आपका जन्म-जन्मांतर का साथी बन सकता है।

एक दीपक की क्रांति

- निलेश कुमार मंडल

उत्क्रमित उच्च माध्यमिक विद्यालय गौरीपुर, चान्दन

एक छोटा-सा गाँव था आलोकपुर।
वहाँ के लोग पहले बहुत खुशहाल थे, पर अब गाँव पर अंधकार छाया हुआ था। बिजली नहीं थी, रास्ते गंदे थे, और सबसे बड़ी बात, गाँव के लोग डर और निराशा में जी रहे थे। भ्रष्ट सरपंच ने सबकी मेहनत की कमाई हड़प ली थी।

एक शाम, छोटी दिवाली के दिन, जब सबके घरों में सन्नाटा था, एक घर में एक छोटा-सा दीपक जल उठा। वह घर था सुमन दीदी का जो गाँव के बच्चों को नि:शुल्क पढ़ाती थीं।

गाँव के लोग बोले – "दीदी, अब दीया जलाकर क्या होगा? अंधकार इतना गहरा है!"
सुमन दीदी मुस्कुराईं और बोलीं – "जब समाज अंधकार में डूबा हो, तो एक दीपक भी क्रांति की शुरुआत बन सकता है।"
फिर क्या था, उन्होंने बच्चों को बुलाया और कहा- "आज हम सब मिलकर अपने गाँव की सफाई करेंगे, हर घर में एक दीपक जलाएँगे और कल की मुख्य दीपावली की तैयारी करेंगे।"
बच्चे निकल पड़े- कूड़ा उठाया, दीवारें सजाईं, दीए जलाए। धीरे-धीरे गाँव वाले भी जुड़ते गए। देखते ही देखते पूरा आलोकपुर उजाले से चमक उठा।
यह देखकर सरपंच गुस्से में आया "तुम सब क्या कर रहे हो?"
सुमन दीदी ने शांत स्वर में कहा- "हम अन्याय और भय के अंत का उत्सव मना रहे हैं।"
"सत्य और साहस की जीत ही असली दीपावली है।"

उस दिन गाँव वालों ने निश्चय किया, अब वे डरेंगे नहीं, सच्चाई के साथ खड़े होंगे। और कुछ ही दिनों में नया, ईमानदार नेतृत्व चुना गया।

शीशे वाली लड़की

- अवधेश कुमार

उत्क्रमित उच्च माध्यमिक विद्यालय रसुआर, मरौना, सुपौल

करिश्मा नाम की एक लड़की थी, जो पढ़ाई में ठीक थी लेकिन सबके सामने बोलने से डरती थी। उसे लगता था कि लोग उसकी हंसी उड़ाएँगे। उसे करियट्ठी शब्द समाज में सुनकर बहुत बुरा लगता था । हमेशा रंगभेद की शिकार लड़की सबसे ज्यादा होती है, इसलिए उसे डर बना रहता था हमेशा कोई कुछ बोल न दे।

क्लास में जब भी टीचर कोई सवाल पूछते, वो सही जवाब जानकर भी चुप रह जाती।

धीरे-धीरे वो खुद से ही हार मानने लगी। घर आकर वो अक्सर आईने के सामने खड़ी होकर कहती-
"मैं सुंदर नहीं हूं, मैं कमजोर हूं, मुझमें कुछ खास नहीं..."
एक दिन उसकी दादी ने ये सुना। उन्होंने मुस्कुराकर कहा,
"बेटी, अगर शीशा तेरी कमजोरी दिखा सकता है, तो वही तेरी ताकत भी दिखा सकता है।"
"कल से इसमें खड़ी होकर खुद से कहना, 'मैं अद्वितीय हूं, मैं कर दिखाऊंगी।' "

शुरू में करिश्मा को अजीब लगा, पर दादी के कहने पर उसने कोशिश शुरू की।
हर सुबह वो आईने में खुद से बोलती- "मैं डरपोक नहीं, मैं बहादुर हूं। मैं कर सकती हूं।"

धीरे-धीरे उसका आत्मविश्वास लौट आया। वो स्कूल की वाद-विवाद प्रतियोगिता में उतरी, जहां उसने शुरुआत में कांपा ज़रूर, लेकिन खत्म उसी ने जोश से किया।

उसके बाद वह कई प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगी, हार-जीत की परवाह किए बिना।तीन साल बाद वही करिश्मा अपने कॉलेज की बेस्ट डिबेटर बनी।
अब वह टीचर बनकर छोटे बच्चों को सिखाती है—
"आईना कभी झूठ नहीं बोलता, उसमें वही दिखता है जो तुम देखना सीख लेते हो। खुद को नकारना बंद करो, खुद को अपनाओ।"
नैतिक शिक्षा: जो डर को पहचान लेता है, वही उसे हरा सकता है। हारने से पहले अगर खुद पर विश्वास हो जाए, तो जीत तय है।

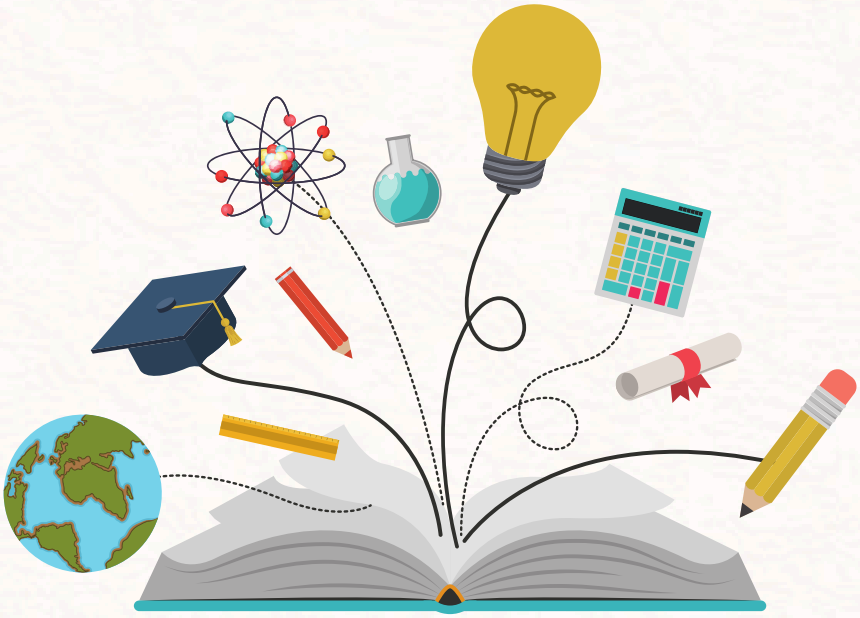

शैक्षणिक

समाज में बुजुर्गों का स्थान

- गिरीन्द्र मोहन झा

+२ भागीरथ उच्च विद्यालय, चैनपुर-पड़री, सहरसा

समाज में बुजुर्गों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है। महाभारत के उद्योगपर्व में कहा गया है।-

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।

(घर के बड़े-बुजुर्गों की सेवा से आयु, विद्या, यश और बल- इन चारों की वृद्धि होती है।)

हितोपदेश का कथन है, "बुजुर्गों के वचन विपत्ति में रामबाण के समान अमोघ होते हैं।"

कहते हैं, वह घर घर नहीं, जहां बच्चे, महिलाएं और बूढ़े नहीं हों। घर के बड़े-बुजुर्गों की थोड़ी सेवा और संगति से भी विनयभाव, तथा विनयभाव के साथ-साथ वे शिक्षाएं स्वत: प्राप्त हो जाती हैं, जो उन्होंने अपने ज्ञान और अनुभव द्वारा अर्जित किया है।

मेरे आदरणीय गुरुदेव डॉ के. एस ओझा सर कहते थे, "छोटों को प्यार देना, मगर संगत हमेशा बड़े लोगों से रखना।"

परिवार के पूर्वज, बुजुर्ग अपने संघर्ष, उद्योग और तपस्या से कई संपदाओं, भूमि, कुल-आचार, सद्संस्कार, श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों को अर्जित करते हैं, जो वंशजों, परिजनों-पुरजनों तथा संगत में रहने वाले लोगों को स्वत: प्राप्त हो जाता है। उसके संरक्षण-संवर्धन का दायित्व वंशजों का होता है।

पिता के वचनों में पूर्वजों के संस्कार-सद्विचार स्वत: झलक जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी लिखा है।-

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी।
बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी।।

समाज में भी कुछ बुजुर्ग ऐसे होते हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान, अनुभव, धूप-छांव से बहुत कुछ अर्जित किया है, जिनके पास थोड़ा भी बैठ जाने से हम वह सबकुछ स्वत: प्राप्त करने लगते हैं। फिर हमसे भावी पीढ़ियों में स्वत: उसका संवहन व संचारण होता है। हमारे गुरुजन भी बड़े-बुजुर्ग ही होते हैं। गुरु शब्द का अर्थ ही है- भारी अर्थात् जो ज्ञान, अनुभव, विद्वत्ता और ईश्वरीय साधना में उच्चतर व श्रेष्ठतर हो, वही गुरु है।

वेद बुजुर्गों की परिभाषा में कहता है, "वृद्ध वे ही हैं, जो श्रेष्ठ अनुभवी व विवेकी हों, किसी भी परिस्थिति में जिनके पग विचलित न हों।"

एक संत के द्वारा कथित कथा के अनुसार, "एक जंगल में चारों ओर आग लगी थी। एक अंधा और एक लंगड़ा था। वे दोनों कैसे बचते? अंधे ने लंगड़े को कंधे पर बैठा लिया और वे दोनों आग को पार कर गये। आज भी चारों ओर आग लगी है। ईर्ष्या-द्वेष की आग। अंधा और लंगड़ा है। अंधी जवानी और लंगड़ा बुढ़ापा।

युवावस्था जब वृद्धों के अनुभवों को लेकर आगे बढ़ेगी, तो वह हर आग से पार हो सकती है और शिखर तक पहुंच सकती है।"

भगवान राम ने वनवास के दौरान ऋषियों-मुनियों से विनम्रता और सद्व्यवहार के बल पर थोड़े देर की संगति से वे सभी शिक्षाएं और उपयोगी अस्त्र-शस्त्र स्वत: प्राप्त कर लिया, जो उन्होंने कई वर्षों की तपस्या से अर्जित किया था। मैंने अनुभव किया है, घर के बड़े-बुजुर्गों के पास थोड़ी देर भी बैठकर उनसे बातें कर लेने से, उनकी सेवा-शुश्रुषा कर लेने से हमें विनयभाव के साथ-साथ वह सबकुछ स्वत: प्राप्त होने लगता है, जो उन्होंने अपने जीवन के ज्ञान-अनुभव, कई धूप-छांवों से अर्जित किया है। उन बड़े-बुजुर्गों का भी मनोरंजन हो जाता है।

समाज में भी कुछ ऐसे श्रेष्ठ ज्ञानी, विचारशील बुजुर्ग होते हैं, जिनके सान्निध्य में कुछ समय बैठने पर भी लाभान्वित हुआ जा सकता है। बड़े-बड़े कार्यक्रमों में भी उनके वचन सुनाने-सुनाने, थोड़ी देर सम्प्रेषण से भी लाभान्वित हुआ जा सकता है। पुस्तकों में भी लेखक अपने ज्ञान और अनुभवों को रखते हैं। कहते हैं, "यदि आपने एक पुस्तक पढ़ा तो आपने उस पुस्तक के लेखक के चालीस वर्षों को पढ़ लिया।"

श्रीमद्भगवद्गीता में भी तत्वज्ञानियों के पास श्रद्धापूर्वक बैठकर, झुककर, सेवा-सुश्रुषा कर शिक्षा-लाभ करने की बात कही गयी है। बड़े-बुजुर्गों और गुरुजनों की डांट-फटकार में भी जीवन-संदेश छिपा होता है।

हमें परिवार और समाज में बड़े-बुजुर्गों का सम्मान अवश्य

समाज में बुजुर्गों का स्थान

- गिरीन्द्र मोहन झा

+२ भागीरथ उच्च विद्यालय, चैनपुर-पड़री, सहरसा

करना चाहिए।
कहते हैं, विषम स्थितियों में बुजुर्गों के वचन रामबाण सिद्ध होते हैं।

श्री हनुमानजी ने भी बूढ़े जामवंत से ही सुझाव लिया था।

जामवंत मैं पूछउं तोही।
उचित सिखावनु दीजहु मोही।।

हमारे सनातन सांस्कृतिक पद्धति में इस प्रकार से मरणोपरांत भी अपने पूर्वजों का इस प्रकार आदर किया जाता है। तर्पण, पार्वण आदि कर्मों द्वारा कि समाज में वृद्ध आश्रम अथवा बाल आश्रम की आवश्यकता ही न पड़े।

वर्तमान परिदृश्य में नैतिक शिक्षा का महत्व

- अमृता कुमारी

उच्च माध्यमिक विद्यालय बसंतपुर, सुपौल

"शिक्षा जीवन की तैयारी नहीं है शिक्षा स्वयं जीवन है"- जॉन डेवी। आज हमारे देश में सच्चरित्रता की बहुत कमी दिखती है जहां तक नजर जाती है लोगों में स्वार्थपरता ही दिखाई देती है। सरकारी और निजी सभी स्तरों पर लोग हमारे मन में विष घोलने का काम कर रहे हैं। इन सब का कारण हमारे स्कूल कॉलेज में नैतिक शिक्षा का लुप्त होना है। नैतिक शिक्षा का अभिप्राय "नीति संबंधित शिक्षा" होता है।

व्यापक अर्थ में विद्यार्थियों को नैतिकता ईमानदारी, सदाचरण, सहनशीलता, विनम्रता तथा प्रमाणिकता जैसे गुणों को प्रदान करना ही नैतिक शिक्षा है। मनुष्य को मनुष्य बनाने में नैतिक शिक्षा की अहम भूमिका होती है। सामाजिक क्षेत्र में बच्चों को सही और गलत अंतर करने, सहानुभूति विकसित करने तथा उसे अपने अच्छे कार्यों को करने का प्रभाव सकारात्मक रूप से देखने में इस शिक्षा का गहरा प्रभाव पड़ता है।

विद्यालय बच्चों के सर्वांगीण विकास का मुख्य माध्यम है। यहां बच्चे अपने सहपाठियों तथा शिक्षकों से व्यवहारिक जीवन के कई पहलुओं को सीखते हैं। जो उनके भविष्य निर्माण में मदद करती है। आगे चलकर व्यावसायिक या सामाजिक जिम्मेदारियों को वहन करना इनके लिए आसान हो जाता है। वर्तमान समय में गुरु शिष्य की परंपरा अपने मूल स्तर से भटकती जा रही है। दोनों के रिश्तों में सम्मान का स्थान सिर्फ सफलता प्राप्ति का ध्येय ले चुका है।

विद्यार्थी येन केन प्रकार से परीक्षा में उच्च अंक लाने को प्रयासरत रहते हैं इस क्रम में वह आधुनिक शिक्षा पद्धति और सामग्री का उपयोग बढ़ चढ़कर करते हैं लेकिन शिक्षकों और छात्रों को यह ध्यान रखना चाहिए कि

"विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वात् धनमाप्नोति धनात् धर्मं ततः सुखम्॥"

अर्थात विद्या मनुष्य को विनम्रता देती है विनम्रता से योग्यता प्राप्त होती है योग्यता से धन मिलता है और धन से व्यक्ति धार्मिक बनता है जिसे उसे सुख की प्राप्ति होती है। ऐसे में जरूरी है कि विद्यार्थी को ऐसी शिक्षा दी जाए जो उसे विषय- वस्तु के ज्ञान के साथ-साथ मानवीय मूल्य ,सिद्धांतों और संस्कृति परंपरा को समझने में मदद करें इसलिए महान विचारक 'लॉरेंस कोहलबर्ग' ने शिक्षा के मनोविज्ञान क्षेत्र में नैतिकता को ही केंद्रीय विषय बनाया।

मेरा मानना है कि आज पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा पर अधिक जोर देने की आवश्यकता है जो बच्चों को संस्कार को आधार बनाकर आधुनिकता के साथ जोड़ सके।

उनके नैतिक मूल्यों का ज्ञान इतना प्रभावी हो कि वह कठिन समय में भी गलत कार्य करने को अग्रसर ना हो। हाल में नेपाल में जेन जेड का प्रदर्शन कहीं ना कहीं नैतिक मूल्यों में कमी का प्रमाण था।

समाज में व्याप्त बेरोजगारी, गरीबी , अराजकता तथा भ्रष्टाचार व्यक्ति को गलत कृत्य करने को प्रोत्साहित करती है। यदि प्रारंभिक शिक्षा में ही नैतिक मूल्यों को समझ लिया गया तो ऐसे संघर्ष की घड़ी में व्यक्ति धैर्य रखते हुए समाजिक आदर्शों को पकड़े रहने में सक्षम हो सकता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नैतिक शिक्षा मानव व्यक्तित्व के उत्कर्ष का, संस्कारित जीवन तथा समस्त समाज हित का प्रमुख साधन है. इससे भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, प्रमाद, लोलुपता, छल कपट तथा असहिष्णुता आदि दोषों का निवारण होता है। अतः आवश्यक है कि आज छात्रों को विज्ञान, कला और वाणिज्य के साथ साथ नैतिक शिक्षा भी प्रदान की जाए।

वर्तमान में लोकगीत संस्कृति भूलते बच्चे

- अवधेश कुमार

उत्क्रमित उच्च माध्यमिक विद्यालय रसुआर, मरौना, सुपौल

बिहार की संस्कृति सदियों से लोकगीतों, परंपराओं और सामूहिक संवेदना से समृद्ध रही है।
"घुघआ माना... उपजे धाना" जैसे लोकगीतों में ना सिर्फ बाल्यकाल की मासूमियत छिपी होती है, बल्कि यह गीत हमारी सामाजिक संरचना, भावनात्मक जुड़ाव और सांस्कृतिक विरासत का भी परिचायक हैं।
किंतु आज का बाल जीवन कहीं खोता जा रहा है, वह मिट्टी की सोंधी गंध की जगह स्क्रीन की चमक में सिमटता जा रहा है।

पारंपरिक बचपन की झलक:

- गांव की गलियों में बच्चों की टोलियाँ "घुघआ माना" गाते हुए खेलती थीं।
- नानी-दादी के साथ बैठकर कहानियाँ सुनना, खेतों से जुड़े अनुभव लेना, त्योहारी गीतों में शामिल होना आम था।
- सामाजिक आचार-व्यवहार, रीति-रिवाज और मूल्यों की शिक्षा यथार्थ अनुभवों से होती थी।

"घुघुआ माना, उपजे घाना" एक लोकप्रिय भोजपुरी बाल लोकगीत है, जो पारंपरिक खेल और सांस्कृतिक भावनाओं से जुड़ा हुआ है। यह गीत आमतौर पर बच्चों को झुलाते समय या पारिवारिक माहौल में गाया जाता है, खासकर जब माताएं अपने छोटे बच्चों को गोद में लेकर खेल-खेल में झुलाती है।

गीत का सांस्कृतिक महत्व:

- बाल्यकाल की स्मृतियाँ: यह गीत बच्चों के साथ खेलते समय गाया जाता है, जिससे उनके मन में आनंद और सुरक्षा की भावना पैदा होती है।
- लोक परंपरा का हिस्सा: इसमें ग्रामीण जीवन, फसल की उपज, रिश्तों की मिठास और सामाजिक रीति-रिवाजों की झलक मिलती है।

बोलों में छिपा संदेश:
जैसे *"घुघुआ माना, उपजे धाना"* का अर्थ है- खेल-खेल में धान की उपज की कल्पना, जो समृद्धि और शुभ संकेत का प्रतीक है।

खेल का स्वरूप:
माताएं अपने बच्चों को ठेहुने पर बैठाकर झुलाती हैं और गीत के बोलों के साथ झूले की गति को मिलाकर आनंद देती हैं।

- गीत में मामा का आगमन, नाक-कान छेदना, लड्डू देना, और धान की फसल जैसी बातें आती हैं, जो बच्चों की कल्पना को रंगीन बनाती हैं।
-

आधुनिक बचपन की चुनौती:

- यूट्यूब और ऑनलाइन गेम्स ने बच्चों को आभासी दुनिया में बाँध दिया है।
- "कोरा धरना"- यानि मिट्टी से खेलने, गाँव की गतिविधियों में हिस्सा लेने की परंपरा लगभग समाप्त हो चुकी है।
- घर के आँगन से ज्यादा मोबाइल स्क्रीन अब उनके जीवन का केंद्र बन चुके हैं।

बच्चें और उनका समाजीकरण

- आशीष अम्बर

उत्क्रमित मध्य विद्यालय धनुषी, केवटी, दरभंगा

विषय वस्तु :- बच्चे का विकास अधिकांशतः अनेक स्थितियों और परिस्थितियों में होता है , जो उसको एक सामाजिक प्राणी के रूप में विकसित और परिपक्व करता है। बच्चों में यह प्रक्रिया अनेक कारकों अथवा घटकों के कारण प्रभावित होती है, जिनमें से कुछ इस प्रकार है :-

- *परिवार (Family):-* जैसा कि हमें पूर्व से ही ज्ञात है कि बच्चों की समाजीकरण की प्रक्रिया उसके अपने परिवार से ही प्रारंभ हो जाती है । बच्चा सबसे पहले अपने परिवार के ही सम्पर्क में आता है । अतः उसका अपने घर के सदस्यों जैसे:- माता - पिता , भाई - बहन, चाचा - चाची , दादा - दादी आदि से एक घनिष्ठ संबंध होता है । इनके बीच दुलार - प्यार , सहयोग आदि की भावना अधिक होती है । इन सबका प्रभाव बच्चों के समाजीकरण पर स्पष्ट रूप से पड़ता है । परिवार ही वह पहली संस्था है जिसके सम्पर्क में बच्चा सबसे पहले शिष्टाचार के कुछ नियम सीखता है । परिवार के सदस्यों का व्यवहार , उनका बच्चों के प्रति रवैया , बच्चों से बात करने व उनकी बात सुनने का तरीका आदि बच्चों को दूसरों से व्यवहार करने की समझ प्रदान करता है ।
- *साथियों का समूह (Peer Group):-* समाजीकरण के माध्यम के रूप में परिवार के बाद साथियों का समूह बहुत अहम भूमिका निभाता है । बच्चें जब थोड़े बड़े होते हैं तो वह समान उम्र के अन्य बच्चों के सम्पर्क में आते हैं और वह एक समूह का निर्माण करते हैं । इस समूह की विशेषता यही होती है कि इसमें करीब - करीब सभी बच्चें एक ही उम्र के होते हैं परन्तु भिन्न - भिन्न परिवारों के होते हैं । विद्यालय जाने के पश्चात् बच्चे जिस तरह के समूह का हिस्सा बनते हैं, वह बहुत अलग भूमिका निभाता है । इस उम्र के बालकों के समूह प्रायः एक दूसरे पर अधिक ध्यान देते हैं तथा समूह में मौजूद अन्य सदस्यों का अनुमोदन व स्वीकृति प्राप्त करने की कोशिश करते हैं । इससे बच्चों में सहयोग , सहनशीलता , सामाजिक समझ जैसे गुणों का विकास होता है जो आगे चलकर बच्चों को सामाजिक रूप से अधिक समझदार बनाता है ।
- *विद्यालय (School):-* बच्चों के समाजीकरण के साधन के रूप में विद्यालय का भी महत्व अधिक है । विद्यालय में बालकों को केवल शिक्षा ही नहीं दी जाती बल्कि सामाजिक मूल्यों , सामाजिक संज्ञान , सामाजिक मानकों व मापदंडों के आधार या ढाँचे में बच्चों को ढालते हैं । विद्यालय की भौतिक संरचना , शिक्षक , पाठ्यपुस्तक आदि का असर भी बच्चों के समाजीकरण पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है । विद्यालय में शिक्षक की भूमिका भी बहुत महत्वपूर्ण होती है । शिक्षक खुद किन मूल्यों / मानक पर चलते हैं, वह भी काफी हद तक बच्चे के समाजीकरण का हिस्सा है । शिक्षक बच्चों से कैसे बात करते हैं ?, कैसे उदाहरण पेश करते हैं ये सब व्यवहार बच्चों के सामाजिक विकास का अहम हिस्सा है । आमतौर पर यह देखा जाता है कि शिक्षक कक्षा में किसी बच्चे को मॉनिटर चयनित करते हैं, जो उसकी गैरहाजरी में कक्षा को संभालता है । इस दौरान बच्चा कक्ष को नियंत्रण करने और सुचारू रूप से कार्यान्वय करने हेतु वही मापदण्ड अपनाता है जो कि शिक्षक कक्षा - कक्षीय प्रक्रियाओं के दौरान अपनाते हैं । यहाँ तक कि बच्चों को संबोधित करने में, डॉटने में, निर्देश देने में इत्यादि बच्चे उसी प्रकार की भाषा का भी प्रयोग करता है जिस प्रकार शिक्षक करता है, विद्यालय में शिक्षक ही बच्चों के आपसी संबंध व उनके समाज के साथ संबंध की बुनियाद रखता है । एक और महत्वपूर्ण आयाम यह है कि शिक्षक बच्चों को किस प्रकार पठन सामग्री उपलब्ध कराते हैं । पठन सामग्री की सहायता से बच्चों में धीरे - धीरे सामाजिक मनोवृति व सांस्कृतिक मूल्यों का विकास होता है ।
    - *पास - पड़ोस (Neighborhood):-* बच्चों के समाजीकरण में पास - पड़ोस भी एक महत्वपूर्ण साधन है । पार - पड़ोस के व्यक्तियों के सम्पर्क में आने से बच्चे नए - नए व्यवहार सीखते हैं । परिवार व विद्यालय के अलावा बच्चे अपने समय का कुछ भाग पास - पड़ोस के साथ बिताते हैं । यह एक ऐसा स्थान है जिससे बच्चों को हर कदम पर परामर्श मिलता है तथा आसपास हो रही क्रियाओं का अवलोकन करने का अवसर मिलता है , जिससे बच्चे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से बहुत कुछ सीखते हैं ।
    - *जाति एवं वर्ग (Caste and class) :-* जाति व्यक्ति के जन्म द्वारा निर्धारित होने वाली एक ऐसी व्यवस्था है जो अपने व्यक्तियों या सदस्यों के समक्ष कुछ नियम या प्रतिबंध प्रस्तुत करता है । हमारा समाज मुख्य रूप से तीन वर्गों में बँटा हुआ है - उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग ।

बच्चें और उनका समाजीकरण

- आशीष अम्बर

उत्क्रमित मध्य विद्यालय धनुषी, केवटी, दरभंगा

यही वर्गीकरण बच्चों को आपस में बातचीत करने से बाधित करता है और बच्चे दूसरे वर्गों के प्रति वही नजरिया अपनाते हैं, जो वह बड़ों से सीखते आए हैं।

- *जनसंचार के माध्यम (Sources of Mass-Communication):-* बच्चों के समाजीकरण पर जनसंचार के विभिन्न माध्यमों का भी उतना ही प्रभाव पड़ता है जितना अन्य कारकों का। आजकल बच्चों का अधिकतर समय टी० वी० एवं मोबाइल फोन देखने में ही व्यतीत होता है। बच्चे आरंभ से ही जनसंचार के विभिन्न साधनों के सम्पर्क में रहते हैं जैसे - टी० वी० , रेडियो , कम्प्यूटर , इंटरनेट, पत्र - पत्रिकाएँ , मोबाइल आदि। इन सभी साधनों से बच्चों नई जानकारी तो मिलती है साथ में वह बहुत लोगों से सम्पर्क बना पाते हैं। परन्तु यह समझना भी जरूरी है कि इन सब के माध्यम से क्या जानकारी मिल रही है और बच्चे इसे कैसे समझ रहें हैं। अतः हम यह सावधानी पूर्वक देखना होगा कि समाजीकरण के आड़ में बच्चें कहीं इन सब माध्यमों का दुरुपयोग तो नही कर रहें हैं। हमें बस सचेत रहने की आवश्यकता है।

सारांश :- निष्कर्ष यह निकलता है कि बच्चों के समाजीकरण में उपरोक्त सभी पहलुओं के सकारत्मक पक्ष पर ध्यान देने की नितांत आवश्यकता है। चूँकि हमारे बच्चें आने वाली पीढ़ी की जिम्मेदारी एवं उत्तराधिकारी हैं इसलिए हमें उनसे जुड़कर रहना होगा।

संदर्भ :- समाचार पत्र एवं अन्य स्रोत।

अंतरिक्ष यात्री, शुभांशु शुक्ला की सफल वापसी

- डॉ० अजय कुमार

उत्क्रमित मध्य विद्यालय चाँपी, कोढ़ा, कटिहार

अंतरिक्ष का अंतहीन संसार हमेशा से मानव मन में अनेकों जिज्ञासाओं को जन्म देता रहा है। बचपन में दादी-नानी के किस्सों में यह परियों और देवताओं का निवास स्थान रहा तो कभी स्वर्ग और नर्क जैसी अवधारणाओं से जुड़ गया। रात में लाखों, करोड़ों नहीं बल्कि अरबों तारों के झिलमिल प्रकाश से बनता तिलिस्म मानव मन- मस्तिष्क को हमेशा से इस दुनिया के अन्वेषण को प्रेरित करता रहा है।

भारतीय मनीषियों ने मानवीय बौद्धिक विकास के प्रारम्भिक काल से ही इस दिशा में अनेकों जिज्ञासाओं के समाधान में रुचि दिखाई साथ ही इसके समाधान के लिए शोध और अन्वेषण कर इसके कई रहस्यों को उद्घाटित भी किया।अंतहीन अंतरीक्ष के अन्वेषण के आधुनिक युग में अंतरीक्ष यात्रा एक महत्वपूर्ण कदम साबित हुई है।इस कड़ी में प्रथम अंतरिक्ष यात्री राकेश शर्मा के बाद भारत के दूसरे अंतरिक्ष यात्री शुभांशु शुक्ला का अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर जाना और विभिन्न प्रकार के कई प्रयोगों को सफलतापूर्वक संपन्न करना मील का पत्थर साबित हुआ है।

शुभांशु शुक्ला का जन्म 10 अक्टूबर 1985को लखनऊ, उत्तर प्रदेश में हुआ । इनके पिता का नाम शम्भू दयाल शुक्ला एवं माँ का नाम आशा शुक्ला है।इनके परिवार में उनकी पत्नी कामना शुक्ला (डेंटिस्ट) और एक पुत्र कियाश भी है। उन्होंने सिटी मांटेसरी स्कूल से अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूरी की।

शुभांशु शुक्ला भारतीय सेना में फाइटर काम्बेट लीडर के साथ ही टेस्ट पायलट भी हैं। विभिन्न विमानों के 2000 घंटा उड़ान का अनुभव रखने वाले शुभांशु ने एक्सिओम मिशन 4 के तहत अंतरिक्ष स्टेशन की यात्रा की।अन्य तीन अंतरिक्ष यात्रीयों के साथ 25 जून को उन्होंने नासा के फ्लोरिडा से अंतरिक्ष स्टेशन की यात्रा की और 26 जून को वह अपने अंतरिक्ष स्टेशन से जुड़े।जहाँ उन्होंने कुल अठारह दिन बिताए।अपने अंतरिक्ष प्रवास के दौरान उन्होंने विभिन्न प्रयोगों के साथ ही, मूंग और मेंथी की खेती भी की।

अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर 18 दिन सफलतापूर्वक बिताने के बाद शुभांशु 15 जुलाई 2025 को अपने अन्य तीन साथियों के साथ सकुशल धरती पर वापस आ गए। अपनी इस यात्रा से वे अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर समय बिताने वाले प्रथम भारतीय और अंतरिक्ष में जाने वाले द्वितीय भारतीय भी बन गए हैं।

उम्मीद की जाती है कि उनकी यह साहसिक अंतरिक्ष यात्रा भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में एक नया अध्याय जोड़ने में सफल होगी और साथ ही अंतरिक्ष के कुछ रहस्यों को उद्घाटित करने में भी सफल रहेगी।

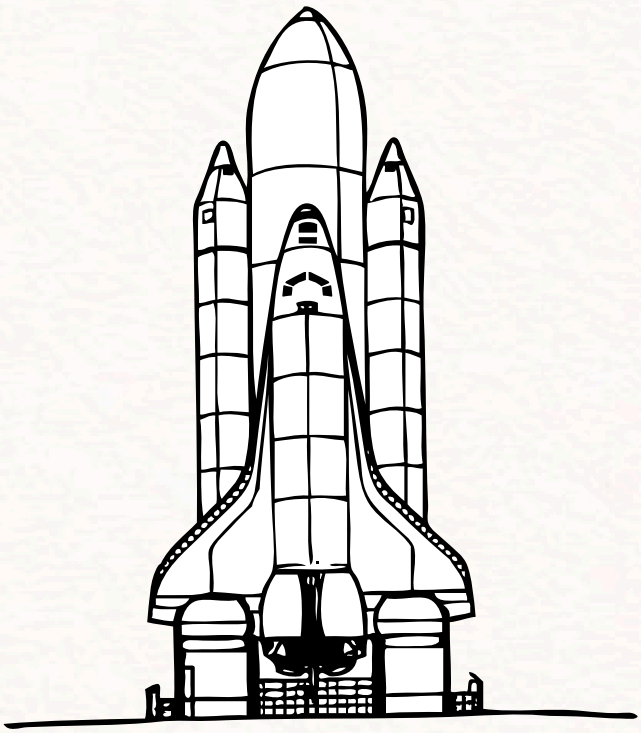

पटना का गोलघर-एक ऐतिहासिक स्मारक

- हर्ष नारायण दास

म० विद्यालय घीवहा, फारबिसगंज, अररिया

पटना विश्व के प्राचीनतम नगरों में से एक है। अपनी ऐतिहासिक गाथा के क्रम में इस नगर के नाम कई बार परिवर्तित हुए। कुसुमपुर, पुष्पपुर, अजीमाबाद, पाटलिपुत्र, पाटलिग्राम इत्यादि नामों से प्रसिद्ध यह नगर प्राचीन काल से ही विश्व के धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र रहा है। पटनदेवी, शहीद स्मारक, सदाकत आश्रम, खुदाबख्श लाइब्रेरी, पटना सिटी का गुरुद्वारा इत्यादि यहाँ के प्रमुख सांस्कृतिक धरोहर धार्मिक स्थल और ऐतिहासिक इमारत आज भी लोगों के आकर्षण के केन्द्र हैं। पटना के इन्हीं प्रमुख आकर्षणों में गोलघर का अपना विशिष्ठ स्थान है।

जिस तरह आगरे की पहचान 'ताजमहल', दिल्ली की पहचान 'कुतुबमीनार', हैदराबाद की पहचान 'चारमीनार', और कोलकाता की पहचान 'विक्टोरिया मेमोरियल' से है ठीक उसी प्रकार पटना की पहचान 'गोलघर' से है।

गोलघर 234 वर्ष पुराना बिहार का एक सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्मारक है। यह बिहार की राजधानी पटना के बाँकीपुर मुहल्ले में गंगा से लगभग 100 मीटर दक्षिण में स्थित है।

गोलघर का शाब्दिक अर्थ- 'गोल आकार का घर' है। यह भारतीय स्थापत्य कला का एक अनूठा नमूना है। इस गुम्बदाकार इमारत पर दो अभिलेख अंकित है- एक हिन्दी में और दूसरा उसका अनुवाद अँग्रेजी में।

इन अभिलेखों के अनुसार गोलघर के निर्माण का निर्णय सन 1770 के प्रसिद्ध दुर्भिक्ष 'द ग्रेट बंगाल फेमिन' के बाद तत्कालीन गवर्नर जेनरल वारेन हेस्टिंग के आदेशानुसार लिया गया था। इस गोलघर का निर्माण 20 जनवरी 1784 के गवर्नर वारेन हेस्टिंग के शासन काल में शुरू हुआ था और 20 जुलाई 1786 को नये गवर्नर जेनरल सर जॉन मैकफर्सन के शासन काल में पूरा हुआ। इस अद्भुत भवन का निर्माण अन्न संग्रह करने के निमित्त किया गया था, जिससे कि दुर्भिक्ष जैसी संकट की घड़ी में इसमें संग्रहित अन्न का उपयोग किया जा सके।लेकिन जिस उद्देश्य से इसे बनाया गया था, उस कार्य के लिए इसका उपयोग नही किया गया।

बहुत बाद में इसका उपयोग सरकारी अन्नागार के रूप में किया जाने लगा और आज भी उसी रूप में किया जाता है। आज यह बिहार में सबसे बड़ा अन्न का गोदाम है। हालांकि गोलघर को बिहार राज्य के दर्शनीय स्थल ऐतिहासिक स्मारक और कला निधि अधिनियम 1676 के अधीन एक राजकीय महत्व का ऐतिहासिक स्मारक घोषित कर दिया गया है।फिर भी इस का उपयोग भारतीय खाद्य निगम के गोदाम के रूप में किया जा रहा है।

यह विशाल गुम्बदाकार इमारत ईंट से निर्मित है जो पृथ्वी की सतह से 2 फीट ऊँचे आधार पर बनी प्रतीत होती है। गोलघर की गुम्बदाकार दीवार के बाहर चारों तरफ आधार से इसके चबूतरे की चौड़ाई 4 फीट 9 इन्च है। चबूतरे से गोलघर की ऊँचाई 96 फीट है। पलिन्थ के पास गोलघर के भीतरी और बाहरी व्यास की लंबाई क्रमशः 109 फीट और 121 फीट 4 इंच है। इस तरह आधार के पास इसके दीवार की मुटाई 12 फीट 4 इंच की है। इसमें दो मेहराबदार दरवाजे हैं-एक उत्तर की ओर दूसरा दक्षिण की ओर। प्रत्येक दरवाजे की चौड़ाई और ऊँचाई क्रमशः 5 फीट1 5 इंच और 7 फीट 6 इंच है। प्रारम्भ में ये दरवाजे भीतर की ओर खुलते थे जो बाद में सुधार कर बाहर की ओर खुलने वाले बना दिये गए। अब इन्ही दरवाजों से इसमें अनाज रखा और निकाला जाता है। गुम्बदाकार गोलघर के गुम्बद की चोटी तक पहुँचने के लिए दोनों ओर से एक वलयाकार 145 सीढ़ियाँ हैं जो नीचे से ऊपर दीवार से गोलघर पर चढ़ा जाता है। गोलघर की दीवार के बीच दीवार का बाहर सतह पर ढाई इंच व्यास वाली लोहे की एक खोखली पाइप लगी है जो दीवार से जगह-जगह स्थिर रूप से जुड़ी हुई है। इसी लोहे की खोखली पाइप को पकड़ कर लोग गोलघर की चोटी पर चढ़ते उतरते हैं दोनों ओर की रेलिंग की दीवार के बाहर की ओर 16-16 की संख्या में आयताकार पट्टियां लगी है। प्रत्येक आयताकार पट्टी के समान आकार के दो वर्गाकार छिद्र बने हुए हैं। पहले इन छिद्रों में गमले रखे जाते थे, परन्तु अब तो यहां ऐसा कुछ भी देखने को नहीं मिलता है।

इसके शिखर के मध्य में 2 फीट 7 इंच व्यास का एक गोलाकार छिद्र बना हुआ था, जिससे उसके अंदर अनाज डाला जाता था। उस समय वह छिद्र 'गारस्टियन पोली' के नाम से प्रचलित हो गया था किन्तु बाद में उसे पत्थर की पट्टिका से बन्द कर दिया गया और उस पर एक बुर्ज बना दिया गया जिससे की नवाब, श्रीमन्त, सत्ताधीश और विदेशों से आने वाले सैलानी उस पर चढ़कर आह्लादित हों तथा अंग्रेज़ों द्वारा तैयार किये गए ढाँचे के आधार पर उन्हीं की देख रेख में बने स्थापत्य कला की इस अनूठे नमूने को

पटना का गोलघर-एक ऐतिहासिक स्मारक

- हर्ष नारायण दास

म० विद्यालय घीवहा, फारबिसगंज, अररिया

देखकर प्रशंसा किये बिना न रह सके।लेकिन 1934 में बिहार में आये प्रलयंकारी भूकम्प में वह बुर्ज टूट गया जो बाद में फिर नहीं बना।

गोलघर की विशेषता है कि इसके गुम्बदाकार स्वरूप की गोलाई लगभग भूतल से ही शुरू हो जाती है। इसके भीतर एक भी स्तम्भ (खम्भा) नहीं है। इस ऐतिहासिक स्मारक में रोम और एथेन्स की भव्य इमारतों की शैली परिलक्षित होती है।

इसकी एक और विशेषता है कि इस की बेमिशाल मजबूती। सन 1934 में आया प्रलयंकारी भूकम्प में भी गोलघर अचल रहा, जबकि सैकड़ों बड़ी बड़ी इमारतें ध्वस्त हो गई। जिस समय गोलघर का निर्माण शुरू हुआ था उस समय रेलगाड़ी और मोटर का आवागमन नहीं हुआ था। इसलिये मालवाहन हेतु मुख्य मार्ग नदी ही थी।

इतिहासकारों के अनुसार गोलघर निर्माताओं की योजना थी कि इस तरह के और भी भवन बंगाल के अनाज उपजाये जानेवाले क्षेत्रों में बनवाये जाएँ, लेकिन एक तकनीकी भूल के कारण दूसरे गोलघर के निर्माण की योजना धरी की धरी रह गई। भूल यह थी कि गोलघर के दोनों दरवाजे भीतर की ओर खुलने वाले थे।

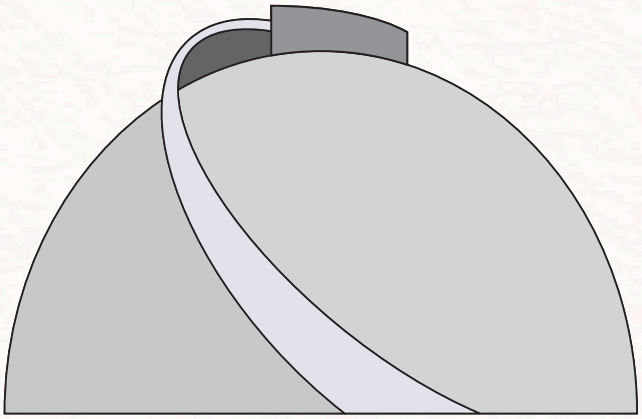

अंततः लाचार होकर दरवाजे को तोड़ना पड़ा। दरवाजे के टूटते ही गोलघर के अन्दर रखे अनाज इतने वेग से बाहर निकले कि कई लोग धराशायी हो गए।इसी भूल के कारण निर्माण से लेकर सन 1956 तक गोलघर यूँ ही पड़ा रहा। यह भूल अंग्रेज इंजीनियर कैप्टन पवन जॉन गारस्टियन ने की थी जिसे गारस्टियन की भूल कहा जाता है। सन 1956 में इन दरवाजे को बाहर से खुलने वाला बना दिया गया। तब से लेकर आजतक यह सरकारी अन्नागार के रूप में उपयोग में लाया जाता रहा है।

आम जनता का पुनीत कर्त्तव्य है कि गोलघर की दीवार पर चाकू या किसी अन्य तेज एवं नुकीले औजार की मदद से अपना नाम खोदकर इस अद्भुत ऐतिहासिक स्मारक को किसी तरह की क्षति न पहुँचावे।

शिक्षा में मातृभाषा की उपयोगिता

- अमरनाथ त्रिवेदी

पूर्व प्रधानाध्यापक, उत्क्रमित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बैंगरा, बंदरा

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह बंधनों से मुक्त होना नहीं चाहता । वह इससे जुड़कर ही अपनी कामयाबी हासिल करना चाहता है । अपने संस्कार जागृत और व्यक्तित्व को प्रतिभावान बनाने के लिए उसे सहज और सरल भाषा की आवश्यकता होती है जिसके सहारे वह अपनी छाप समाज के बीच छोड़ना चाहता है।

यहीं से भाषा अपनानी पड़ती है जिसे वह अपना सके और अपनी प्रतिभा को विकसित कर सके। इस कार्य में उसकी मातृभाषा अधिक कार्य करती है क्योंकि यह भाषा उसकी अपनी भाषा होती है जो सहज रूप से उसके लिए प्रशस्त होती है।

शिक्षा को संपूर्णता के साथ तादात्म्य बैठाने में यह भाषा अन्य भाषाओं से अधिक कारगर और निपुणता दिलानेवाली होती है।

उसे किसी विषय से संबंधित संदर्भ को समझने और उसे विकसित करने में सहुलियत होती है। जब भाषा में सहजता और सरलता दोनों होती है तब

वह सभी संदर्भों के लिए समझ विकसित करने में कामयाब होती है । यह भाषा उसे अनुकूलता प्रदान करती है तथा भावों के संप्रेषण में मददगार सिद्ध होती है।

शिक्षा में मातृभाषा का माध्यम मील के पत्थर की भाँति कार्य करती है जिसका कोई नुकसान नहीं होता , अलबत्ता कई फायदे दृष्टिगत होते हैं जिससे मानवीय मूल्यों का सहज और सुगम विकास होना सुनिश्चित हो जाता है।

अपनी मातृभाषा में एक सहजता होती है एक लयात्मकता होती है ; जिस कारण हम किसी संदर्भ को आसानी से आत्मसात करते हैं और दूसरों को भी इसका लाभ सुगम तरीके से दे सकते हैं।

आजकल बच्चों के बीच मातृभाषा के माध्यम से उनके शिक्षा का विस्तार हो , इस पर जोर दिया जा रहा है ताकि वे किसी विषय को अच्छी तरह आत्मसात कर सकें।

वास्तव में शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में अहम भूमिका का निर्वहन करता है जिसमें उस भाषा की निर्णायक भूमिका होती है जिस भाषा के सहारे उसके ज्ञान चक्षु के दरवाजे खुलते हैं। बहुत बार परिस्थितियाँ मनुष्य के अनुकूल नहीं होती परन्तु जब वह मातृभाषा के सहारे शिक्षा रूपी रत्न को पाता है तब उसे वहाँ से उबरने में अधिक सहायता मिलती है और वह उस आसन्न संकट को भी पार कर लेता है जिसकी सुध पहले उसे नहीं रहती।

विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा में मातृभाषा के उपयोग से महत्वपूर्ण लाभ व्यक्ति को मिलता है क्योंकि उस भाषा की पकड़ उसे बचपन से ही होती है।

अंग्रेजी भाषा में शिक्षण की सार्थकता

- डॉ स्नेहलता द्विवेदी 'आर्या'

उत्क्रमित कन्या मध्य विद्यालय शरीफगंज, कटिहार

अंग्रेजी भाषा की यात्रा एक सामान्य पिछड़े कबीले से शुरू होकर जहां के सभ्य सुसंस्कृत कहे जाने वाले लोगों से तिरस्कृत स्थिति से आज कालजयी और परिधिमुक्त स्थिति को प्राप्त करती हुई विश्व भाषा के रूप मे प्रतिष्ठित है। इस यात्रा में अंग्रेजी को मुश्किल से प्रारम्भिक ढाई सौ वर्ष लगे होंगे और राज सत्ता के संरक्षण ने इस कार्य को आसान बना दिया। अस्तु आज यह विश्व के 88 देशो मे विश्वास और शान के साथ लिखी पढ़ी और बोली जाती है, अर्थात यह विभिन्न संस्कृतियों के मध्य एक बोधगम्य संवाद स्थापित करने का सुगम माध्यम हैं।

जब विश्व विल्कुल छोटा हो चला है, संचार माध्यम बलिष्ट और प्रभावी हो चले हैं तथा व्यक्तिगत अंतस्थ पल भी सोशल मिडिया के प्रभाव से आच्छादित है तब अंग्रेजी की पहुँच निश्चित रूप से बहुसंख्यक मानव के व्यक्तिगत जीवन तक है। इस प्रकार अंग्रेजी ने विश्व मानव के संवाद को एक सूत्र मे पिरोया है।

जैसा कि भाषा के विकास में होता है कि भाषा क्रमशः अन्य भाषा के शब्दों को आत्मसात कर समृद्ध होती है ठीक वैसा ही अंग्रेजी के साथ भी हुआ अतः यह बोली के कई शब्दों को आत्मसात करती हुई सुग्राह्य हुई। इस कारण भी अंग्रेजी बलिष्ट हुई और सामान्य लोगों ने भी बलिष्ट दिखने के लिए अंग्रेजी को अपनाया।

विकास के क्रम मे तकनिकी का विकास पश्चिम के देशो मे तेज गति से हुआ और इसमें अंग्रेजी ने एक सशक्त भाषा के रूप में विज्ञान तकनीकी के विषयों पर एकाधिकार कर लिया इस हेतु अंग्रेजी वैज्ञानिकों और चिकित्सा क्षेत्र के लिए अतुलनीय अवश्यंभावी भाषा हो गई है।

आज अंग्रेजी के बिना विश्व के विभिन्न देशो और संस्कृतियों के मध्य संवाद शून्यता हो जायेगी। वास्तव मे हिंदुस्तान जैसे बहुभाषा, बहु संस्कृति और विविध परिधान वाले देश में भी आश्चर्यजनक रूप से अंग्रेजी की स्वीकार्यता कई मामले मे हिंदी से अधिक है। भले ही यह गुलामी का दुष्प्रभाव हो लेकिन यह आज का यथार्थ है। अस्तु अंग्रेजी देश, विदेश, घर परिवार, विज्ञान तकनीकी इत्यादि अनेकानेक रूपों मे हमें सब के साथ अंतः करण मे समाई हुई भाषा है। अतः यह निश्चित रूप से सार्थक प्रतीत होती है।

सुंदर लिखावट कला या विज्ञान

- अरविंद कुमार

गौतम मध्य विद्यालय न्यू डिलिया, देहरी, रोहतास

महात्मा गांधी ने कहा था खराब लिखावट अधूरी शिक्षा की निशानी है। दरअसल उनकी लिखावट अच्छी नहीं थी और इस बात का अफसोस उन्हें जीवनपर्यंत होता रहा। हम सब भी इस बात को जरूर स्वीकार करेंगे की अच्छी लिखावट पढ़ने एवं लिखावट का मूल्यांकन करने में ज्यादा असरदार होती है। विभिन्न परीक्षाओं में भी अगर लिखे गए वाक्य अपठनीय होते हैं तो बहुत बार उन्हें पढ़े बगैर मूल्यांकन कर दिया जाता है। इसमें खराब लिखावट देखकर या तो उस लिखावट के गुणवत्ता को परखे बगैर कम अंकन कर दिया जाता है अथवा कभी-कभी मात्र लिखी गई पंक्तियों की संख्या के आधार पर उनका आकलन कर दिया जाता है।

बहरहाल जो भी हो खराब लिखावट सबको बुरी लगती है और अच्छी लिखावट दिल खुश कर देती है। मोतियों जैसे चमकते अक्षर प्रारंभिक स्तर पर विद्यार्थी को श्रेष्ठ दिखला देता है। लेकिन यह लिखावट आखिर अच्छी हो कैसे, चिंतनीय विषय है ? क्या अच्छी लिखावट एक कला मात्र है अथवा इसका वैज्ञानिक पहलू भी है?

इन बातों को समझने के लिए सबसे पहले हम प्रयोग के तौर पर हम जिस हाथ से लिखते हैं उसके उलट हाथ से मात्र क से ज्ञ तक अथवा A से z तक लिखकर तो देखें। हमें असुविधा महसूस होगा अथवा हाथ में दर्द भी महसूस होगा। ठीक यही बात उन बच्चों के साथ भी होती है जो अभी प्रारंभिक अवस्था में लिखना शुरू करते हैं। ठीक वैसा ही जैसे दौड़ने की शुरुआत करने वाला या जिम जाने वाला प्रारंभिक अवस्था में शरीर में दर्द महसूस करता है। तो निश्चित रूप से अच्छी लिखावट वैज्ञानिक पहलू भी है और वह है मस्तिष्क द्वारा दिये गई आदेशों का सफलतापूर्वक और जितनी जल्दी हो सके अनुपालन किया जाना।

तो सबसे पहले जिन बच्चों के हाथ में हम पेंसिल या कलम पकड़ना शुरू कराते हैं उन्हें अक्षर लिखने के प्रयास के बदले क्षैतिज ,आड़े और तिरछी रेखाओं का क्रमिक रूप से प्रैक्टिस कराया जाना नितांत आवश्यक है। तत्पश्चात क्लॉकवाइज और पुनः एंटी क्लॉकवाइज वृताकर आकृति बनाना शामिल है। ऐसा करने से हमारे हाथ का वह कौशल विकसित हो जाएगा जिससे मस्तिष्क के आदेश पर अक्षरों के घुमाव, उनके लिखावट के तरीके का अंकन शुद्धता के साथ और स्थिरता के साथ कर सकेगा। बहुत सारे लोग सुलेख लेखन के कार्य को बच्चों के लिए बेवजह का समय बिताया जाना मानते हैं ,परंतु जब बच्चा पढ़ना एवं लिखना शुरू करता है, खासकर पाँचवीं-छठवीं तक तो सुलेख लिखा जाना नितांत ही आवश्यक है। हो सकता है बच्चा शुरू में अच्छी लिखावट धीरे-धीरे लिख सके, लेकिन जैसे ही उसका वह स्किल डेवलप (कौशल विकास) हो जाएगा, लेखन सुधर जाएगा। साथ ही अच्छी लिखावट में गति भी प्राप्त हो जाएगी। इस मोबाइल और लैपटॉप के युग में हाथ से लिखा जाना कम होना कहीं न कहीं प्रशासनिक सेवाओं के परीक्षाओं में अधिक लिखे जाने के अवसर पर छात्रों को कई सारी कठिनाइयों से रूबरू कराता है। अतः अच्छी लिखावट पर उसके वैज्ञानिक पहलू को समझ कर प्रारंभ से ही ध्यान दिया जाना नितांत आवश्यक है।

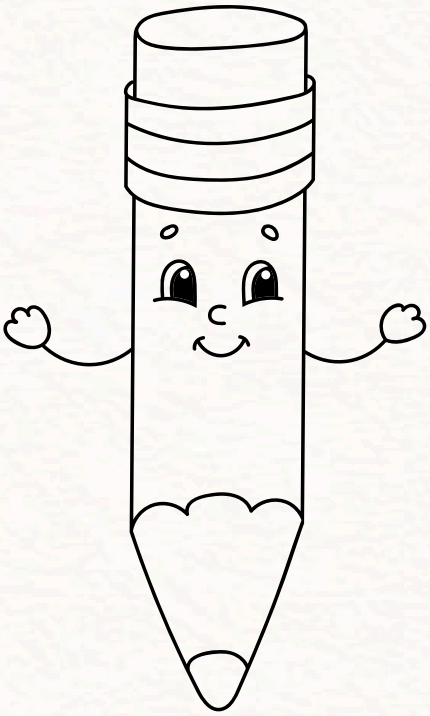

स्वानुभव

मैं शिक्षक कब बना ?

- राकेश कुमार

मध्य विद्यालय बलुआ, मनेर, पटना

बात तो बहुत पुरानी है। माह दिसम्बर वर्ष 2006 जब मुझे शिक्षक नियुक्ति पत्र मिला और मैं शिक्षक के पद पर आसीन हुआ। मेरी नियुक्ति "शारीरिक शिक्षक" के पद पर हुई। शिक्षक बनने के पूर्व मैं एक निजी कंपनी में कार्यरत था।

जब मैं शिक्षक बना, विद्यालय में योगदान किया तो हमारे प्रधान शिक्षक ने पूछा कि आप "शारीरिक" के अलावा और कौन-सा विषय बच्चों को पढ़ा सकते हैं ? मैं कुछ देर शांत रहा क्योंकि इसके पूर्व शिक्षण का कोई अनुभव मुझे नही था लेकिन मुझे कोई निर्णय लेना था तो मैंने बोला सर "अंग्रेज़ी" पढ़ा दूँगा।

मैंने ये विषय इसलिए चुना की जब मैं "निजी कंपनी" में कार्यरत था तो "अंग्रेजी" मे काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता था क्योंकि मेरी शैक्षिक पृष्ठभूमि "सरकारी विद्यालय" हीं था तो मेरा मानना था कि सरकारी विद्यालय के बच्चे "अंग्रेजी" में कमजोर होते है।

मुझे याद है एक शिक्षक के रूप में अपनी पहली कक्षा वर्ग VII से शुरु की थी। वर्ग में जाते हीं पूछा कि अंग्रेजी का किताब पढ़ने किसको-किसको आता है? मुझे आश्चर्य हुआ की एकाध बच्चे ने हाथ उठाया। जिस बच्चे ने हाथ उठाया उसकी पढ़ने की क्षमता भी न के बराबर थी। इस संदर्भ के बाद मैंने कई स्तर से प्रयास किया कि कम से कम बच्चों को अंग्रेजी की किताब पढ़ने आ जाए लेकिन प्रयास नाकाफी साबित हो रहे थे।

मैंने इस संदर्भ में अपने वरीय लोगों से चर्चा करता तो परामर्श नकारात्मक हीं होता था। उनके द्वारा बताए गए उपाय शायद शिक्षा के मानक के अनुरूप नहीं था।

समय दर समय बीतता गया। मैं भी आत्मसंतुष्टि के बिना कार्य करना सीख रहा था कि अचानक परिवर्तन हुआ। वर्ष 2018 में एक समाचार पत्र पढ़ रहा था कि मेरी नजर एक खबर पर आकर रुक गई वो खबर थी "टीचर्स ऑफ बिहार" की संकल्पना की उसमें जुड़ने का तरीका का भी जिक्र था लेकिन उस समय मैं सोशल मीडिया पर उतना सक्रिय नही था। मेरे शैक्षिक जीवन मे "टीचर्स ऑफ बिहार" ने यहीं से परिवर्तन लाना शुरू किया। मैं सोशल मीडिया का उपयोग हेतु सक्रिय हो गया और फेसबुक ग्रुप से जुड़ गया और इसपर होने वाली गतिविधियों को देखने लगा। यकीन मानिए मेरे लिए ये सब गतिविधियाँ एक सुखद रोचक अनुभव था, जिससे मैं अभी तक अनजान था। अब मेरी कोशिश 'टीचर्स ऑफ बिहार' के "फाउंडर" से जुड़ने की थी इस संदर्भ मे मैंने सोशल मीडिया की सहायता से उनसे संपर्क किया और उन्होंने मुझे मेरी रूचि के अनुसार एक विषय वस्तु पर एक आलेख लिखने को कहा। वो दिन था 15 दिसंबर 2019। मैंने वो आलेख लिखकर भेज दिया और विद्यालय चला गया। वो मेरा शैक्षिक कार्यकाल का प्रथम आलेख था। मैं पूरे दिन उस आलेख के बारे में हीं सोचता रहा कि "फाउंडर महोदय" को वो आलेख पसंद आएगा या नहीं और शाम में जब घर आया तो मन में नियंत्रित इच्छा अनियंत्रित हो गई और मैंने अपना मोबाइल निकाला और "फाउंडर महोदय" का संदेश देखा जिसमें लिखा हुआ था "Welcome to team", मुझे अपार खुशी की अनुभूति हुई कि मैं "टीचर्स ऑफ बिहार, द चेंज मेकर्स" का हिस्सा हूँ।

मुझे ऐसा लगा कि मैं आज एक शिक्षक बन गया। इसके बाद मैं प्रत्येक दिन बच्चों के बीच टीचर्स ऑफ बिहार पर डाली गई गतिविधियों एवं "दिवस ज्ञान" की चर्चा करता और बच्चों को स्वयं आगे आने को प्रोत्साहित करता। मेरी यह सोच थी कि बच्चों को अधिक से अधिक क्रियाशील बनाना है और बहुत जल्द मुझे सुखद परिणाम मिलने लगे जिससे प्रोत्साहित होकर मैं भी प्रतिदिन कोई न कोई गतिविधि करता एवं करवाता।

यहाँ पर मैं एक बात का उल्लेख करना चाहता हूँ कि मुझे "टीचर्स ऑफ बिहार" के किसी भी सदस्य से प्रत्यक्षतः मिलने का मौका टीचर्स ऑफ बिहार से जुड़ने के छः साल बाद वर्ष 2025 में राज्यस्तरीय शिक्षक समारोह में हुआ लेकिन फिर भी हमेशा ऐसा महसूस होता था कि हम एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ये टीचर्स ऑफ बिहार का सबसे बड़ा गुण है।

धन्यवाद "टीचर्स ऑफ बिहार" का जिसने मुझे शिक्षक बनाने में मदद की। जिसने मेरी शिक्षण विधि को आसान किया। मैंने स्वयं कि अभिव्यक्ति को "मैं शिक्षक कब बना?" नाम इसलिए दिया कि क्योंकि मेरा मानना है कि आपने पद कब धारण किया है वो महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि आप अपने कार्यों को आत्मसंतुष्टि के साथ आनंद उठाना कब शुरु किया है वो महत्वपूर्ण है।

समस्त टीचर्स ऑफ बिहार को फाउंडेशन डे की हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं !

सम्मानों का गोरखधंधा

- स्वराक्षी स्वरा

मध्य विद्यालय हाजीपुर, आवासबोर्ड, खगड़िया

जी हां, बिल्कुल सही सुना आपने। आज के इस भावहीन दौर में हर चीज़ की ख़रीद फरोख्त होने लगी है। आज रात के अंधेरों में जुगनू सूरज को चिढ़ाने में लगे हैं। अब सम्मान ज्ञान और विद्वता का नहीं,बल्कि धनों का होता है। जिसके पास जितना धन उसका उतना ही सम्मान।

मैंने कई बार इस पर बोलने की कोशिश की है। बोला भी है। इस पर मुझे ही कटघरे में खड़ा किया जाता है कि आप भी सम्मानित होती हैं तो क्या वो सब खरीदे हुए हैं?

मुझे अब सम्मानित होने पर सफाई देनी होती है। क्या हो गया है?

कुछ संस्थाएं हैं जो सराहनीय कार्य कर रही हैं। ऑनलाइन माध्यम से ही वो ज़मीनी स्तर का कार्य कर रहीं हैं। लेकिन इन्हीं टूट-पुंजियों की वजह से वो भी गेंहू में घुन की तरह पीस रही हैं।

आखिर इन्हें ये समझ क्यों नहीं आता कि पैसे देकर कब तक और कहां तक जाया जा सकता है? जब कार्य हम स्वयं कर रहें हैं और आपको अच्छा लग रहा तभी सम्मानित करेंगे तो फिर हम ही पैसे क्यूं दे भई? कभी ये सवाल इन लोगों ने नहीं उठाया और जिसने उठाया वो मेरी ही तरह हाशिए पे कर दिए गए हैं। तो इससे क्या ही फर्क पड़ता है? जिस दिन लोग ये समझ जायेंगे कि मेहनत और सच्चाई से ही लंबे समय तक की जीत हासिल की जा सकती है, उस दिन इन पोंगा संस्थानों की दुकान बंद हो जाएगी।

आज धड़ल्ले से प्रकाशन खुल रहा है, लेखक छप रहे। कोई मतलब नहीं कि पुस्तक में वर्तनी शुद्ध है या नहीं? साहित्य की बात है या नहीं? छपने के नाम पर कुछ भी छापा जा रहा है। शुरुआत में जब मेरी भी रचनाएं छपी थीं तो खुशी हुई थी, आज जब उसे देखती हूं तो लगता है कि ये क्या छपा था? इतनी अशुद्धियां और छप गए?

पत्रिकाओं में, समाचारपत्रों में छपने का मतलब होता है कि ये सबसे बेहतरीन है जिसे पढ़कर और लोग भी प्रयास करे, कुछ सीखे। लेकिन जब पढ़ने के बाद अशुद्धियों को देख कर मन खिन्नता से भर उठे तो सवाल उठता है !

माना रचनाकार को तो अपनी लिखी सब रचनाएं प्यारी होती हैं। वो भेज देते हैं किंतु संपादक महोदय की बुद्धिमत्ता को क्या हो जाता है? वो क्यूं अपनी कार्यशैली को भूल जाते हैं? उन्हें तो शुद्ध करना चाहिए और यदि अशुद्धियां ज्यादा है तो सही मार्गदर्शन देके रचनाकार को समझाना चाहिए ताकि भविष्य में वो बेहतरीन कर सके, लेकिन वो पत्रिका में छापने हेतु राशि पहले ही प्राप्त कर चुके होते हैं, जिसके पीछे सारी अशुद्धियां छिप जाती हैं। मुझे एक बात समझ नहीं आई अभी तक। जब बचपन से ही एक कक्षा के बाद दूसरी फिर तीसरी फिर.... बढ़ाई जाती है। खेल में पहले जूनियर फिर सीनियर फिर कैप्टन बनाया जाता है। राजनीति में भी पहले मुखिया, फिर विधायक फिर मंत्री बनाया जाता है। सेना में भी क्रमबद्ध तरीका अपनाया जाता है। डॉक्टरों में भी धीरे धीरे ही आगे बढ़ा जाता है। इतना ही नहीं बाबाओं में भी पहले सन्यासी फिर साधना फिर मंत्र सीखना फिर आगे.. आगे किया जाता है।

तो केवल साहित्य ही एक ऐसा क्षेत्र क्यों है जहां सीधे ही मंचों पर पहुंचा जा सकता है? आप चाहे आज से लिखना शुरू करो, कुछ आता हो या न हो पैरवी है, पैसे हैं, संयोजन है तो आप किसी भी वरिष्ठ के साथ मंच साझा कर सकते हैं। ऐसा नहीं है कि नवोदितों में प्रतिभाओं की कमी है। लेकिन उसे सही तरीके से निखार कर यदि मंच प्रदान किया जाए तो साहित्य की प्रगति हो सकती है।

ये कार्य केवल साहित्य में ही नहीं हो रहा, कई ऐसे शिक्षण संस्थान भी है, कई सामाजिक संस्थान भी हैं, कई ऐसे मठ हैं जो रजिस्ट्रेशन के नाम पर रकम लेकर उनके नाम को शामिल करते हैं। आने जाने रहने का खर्च भी स्वयं आप का। यदि आप किसी को साथ में ला रहे तो उसका भी भोजन और चार्ज आपको ही देने होंगे। इतना खर्च करने के बाद आपको आपके मन अनुरूप समय भी नहीं दिया जाएगा। 5 मिनट बोलने को बोला तो ठीक नहीं तो बीच मंच से आपका माइक बंद करके आपको उतारा भी जा सकता है। ऐसी स्थिति आप पुनः किस तरह से स्वयं से आंखे मिला सकेंगी? मैंने इस तरह की घटनाओं से आहत होकर लोगों के परिवार को बिखरते भी देखा है। मैं स्वयं भी कई बार इस तरह के कृत्यों की साक्षी रही हूं और बेहद दुखित भी हुई हूं। यदि मेरे साथ ऐसा हो जाए कि मंच पर से माइक बंद कर दिया जाए तो मैं या तो मंच पर ही तांडव कर दूं या फिर अत्मग्लानी में लेखन ही छोड़ दूं या कुछ भी.....क्योंकि एक सच्चा साहित्यकार केवल और केवल भाव का भूखा होता है। उसकी रचनाओं पर झूठी हजार तालियों से एक सच्ची चुटकी ही काफ़ी होती है।

मेरा आग्रह है आप सभी रचनाकार से कि आप अपनी महत्ता को जानें और उसे गिरने से बचाएं। साहित्य की सेवा सच्चे मन से करें, धन से नहीं। धन्यवाद!

साहसी अनीश

- सुमोना रिंकू घोष

प्राथमिक विद्यालय मंडलटोला, तुलसीपुर, खरीक, भागलपुर

अनीश के पिता फॉल्टि मंडल गुजरात में एक नमक की फैक्ट्री में काम करते हैं वहां वे मजदूरी करते हैं। अनीश की मां एक ग्रहणी है जो कुशलता पूर्वक अपना घर चलाती है अनीश अपने पांच भाइयों में से तीसरे नंबर पर है।
अनीश की बड़ी मां विद्यालय की रसोइया है।

अनीश नियमित रूप से विद्यालय आता है और विद्यालय के सभी गतिविधियों में बढ़-चढ़कर भाग लेता है विद्यालय में प्रतिदिन पढ़ाई के साथ-साथ अन्य जो भी सह शैक्षणिक गतिविधियां होती हैं जिनमें अनीश पूरी तल्लीनता से भाग लेता है।

प्रत्येक शनिवार को सुरक्षित शनिवार के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की आपदाओं चाहे वह सामाजिक कुरीतियां जैसे बाल विवाह, बाल श्रम हो, कोई प्राकृतिक आपदा जैसे बाढ़, भूकंप आदि हो या मानव जनित आपदा जैसे सड़क दुर्घटना या बम विस्फोट हो या किसी संक्रामक रोगों जैसे डायरिया, निमोनिया आदि हो, किसी न किसी निर्धारित आपदा पर बच्चों को बचाव के तरीके बताए जाते हैं।

अनीश कक्षा में बताए गए सभी बातों को बड़े ध्यान से सुनता है और उन पर आवश्यकता पड़ने पर अमल भी करता है।
विद्यालय के आसपास कई तालाब नुमा गड्ढे हैं जो जलकुंभी से आच्छादित है।ये गड्ढे बड़े ही खतरनाक है यदि कोई इनमें गिर जाए तो बाहर से दिखाई भी न दे।
एक दिन तेज बारिश हो रही थी और सुरक्षित शनिवार के अंतर्गत बच्चों को डूबने से बचाव और सुरक्षित नौकायन के बारे में बताया जा रहा था सभी बच्चे बड़े ध्यान से सारी बातों को समझ रहे थे।

विद्यालय की प्रधान शिक्षिका जो की आपदा प्रबंधन की राज्य स्तरीय मास्टर प्रशिक्षक भी है बच्चों को डूबते व्यक्ति को बचाने के तरीके का मॉक ड्रिल भी करवा रही थी जबकि विद्यालय के अन्य शिक्षक गण बच्चों को अनुशासित रखने में मदद कर रहे थे।बच्चों को बताया जा रहा था कि यदि कोई डूब रहा हो तो उसे हाथ ऊपर करके बचाव बचाव की आवाज देनी चाहिए और यदि कोई राहगीर इस प्रकार की आवाज सुने तो यदि वह तैरना नहीं जानता है तो कभी पानी में न उतरे बल्कि आसपास पड़े हुए किसी डंडे या रस्सी को डूबते व्यक्ति की तरफ फेंके और उसे पकड़ने के लिए कहे, जब डूबने वाला व्यक्ति रस्सी या डंडे को पकड़ ले तो उसे खींचकर बाहर निकाल लें।
यदि बचाने वाले व्यक्ति को तैरना आता है तो वह पानी में कूद कर डूबते व्यक्ति को पीछे की ओर से सहारा देते हुए बाहर निकाल ले।

विद्यालय में होने वाली गतिविधि में सभी शिक्षक गण और रसोइया भी सहयोग कर रही थीं।
विद्यालय के वर्ग कक्षों में मॉकड्रिल चल रहा था और बाहर तेज बारिश हो रही थी।
वर्षा के जल से और आस पास के जल के बहाव के कारण सारे तालाब लबालब भर गए थे और सड़क पर भी पानी भर गया था।

विद्यालय में छुट्टी के बाद सारे बच्चे घर जा रहे थे तभी दो छोटी बच्चियां अनु प्रिया और राधिका जिन्होंने दो दिन पूर्व ही विद्यालय में नामांकन लिया था वे उत्सुकता वश या अज्ञानता वश तालाब के पास चली गई और उनमें से एक छात्रा अनुप्रिया का
पैर फिसल गया और वह तालाब में गिर कर जलकुंभियों में फंस गई।

दूसरी छात्रा राधिका कुमारी ने अनुप्रिया का हाथ पकड़कर सहारा देना चाहा परन्तु वह भी गिर गई।

अनीश भी अपनी ही धुन में विद्यालय से घर जा रहा था गीत गाता, गुनगुनाता हुआ तभी उसकी नजर उन दोनों बच्चियों पर पड़ी जो पानी में हाथ पैर मार रही थी। अनीश को कक्षा में पढ़ाए गए पाठ और कराए गए मॉक ड्रिल का स्मरण हो आया क्योंकि उसने अभी तुरंत ही तो मॉक ड्रिल में भाग लिया था उसने आसपास नजर दौड़ाई उसे एक लकड़ी का टुकड़ा दिखाई पड़ा उसने तुरंत लकड़ी उठाकर डूबती छात्राओं की ओर बढ़ाया और उसे पकड़ने के लिए कहा परन्तु बच्चियां अनीश के इशारे को समझ नहीं सकीं। यद्यपि अनीश को तैरना आता था, उनने बिना समय गंवाए तालाब में छलांग लगा दी और जलकुंभी में फांसी डूबती बच्चियों को खींचकर बाहर निकाला।
पूरे गांव में आग की तरह बात फैल गई कि विद्यालय की दो छात्राएं डूब गईं हैं।

खबर प्रखंड के प्रखंड विकास पदाधिकारी तक पहुंच गई। प्रखंड विकास पदाधिकारी ने अविलंब स्थिति की जांच हेतु श्रीमान प्रखंड शिक्षा पदाधिकारी को विद्यालय भेजा। प्रखंड शिक्षा पदाधिकारी ने विद्यालय जाकर आवश्यक दिशा निर्देश दिए और अनीश की बहादुर की प्रशंसा की।

साहसी अनीश

- सुमोना रिंकू घोष

प्राथमिक विद्यालय मंडलटोला, तुलसीपुर, खरीक, भागलपुर

विद्यालय की प्रधान शिक्षिका ने अनीश की बहादुरी और दो छात्राओं अनुप्रिया और राधिका के सुरक्षित बचने की कहानी बिहार राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण को भेजी।

बिहार राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के उपाध्यक्ष महोदय एवं अन्य गण मन्य लोगों ने अनीश की भूरि – भूरि प्रशंसा की श्रीमान उपाध्यक्ष महोदय ने प्राधिकरण के सभागार में अनीश की बहादुर के लिए दिनांक 13 अगस्त 2025 को अनीश को 2100 रुपए का चेक, प्रशस्ति-पत्र और अन्य उपहार देकर पुरस्कृत किया साथ ही उसे प्रशिक्षित करने वाली शिक्षिका श्रीमती सुमोना रिंकू घोष को भी 1100 रुपए का चेक, अंग वस्त्र, प्रशस्ति पत्र और स्मृति चिन्ह प्रदान कर पुरस्कृत किया गया।

श्रीमान जिला शिक्षा पदाधिकारी, भागलपुर ने भी अनीश को बाल दिवस के अवसर पर पुरस्कृत करने की घोषणा की है।

जलकुंभी से आच्छादित तालाब जिसमें बच्चियां गिरी थीं।

अनीश और छात्राएं (अनु प्रिया और राधिका जो डूबने से बचीं)

आवश्यक दिशा निर्देश देते प्रखंड शिक्षा पदाधिकारी, खरीक, भागलपुर

मीरा की चुप्पी

- मो.जाहिद हुसैन

उत्क्रमित मध्य विद्यालय मलह बिगहा, चंडी, नालंदा

उत्क्रमित मध्य विद्यालय मलह बिगहा, चण्डी, नालन्दा में पहली कक्षा में एक बच्ची का नामांकन हुआ। उसका नाम मीरा था। वह हमेशा चुप-चुप रहती थी। उसके मुंह से आवाज़ निकलते मैंने कभी नहीं सुनी लेकिन जब मैंने बच्चों से पूछा कि यह लड़की इतना चुप-चुप क्यों रहती है। कई बच्चों ने बतलाया, "यह लड़की घर में तो बोलती है लेकिन विद्यालय में कुछ नहीं बोल पाती।" शायद वह डरती है।

वर्ग शिक्षक से पता करने पर पता चला कि वह वर्ग कक्ष में पीछे कोने में चपुचाप बैठी रहती है। किसी भी बात का वह कोई प्रतिक्रिया नहीं देती। मैंने मीरा के मन-मस्तिष्क को पढ़ना चाहा। आखिर राज़ क्या है उसकी ख़ामोशी का?

पता चला कि उसकी माँ महीना दिन पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो गई है। उसका एक भाई है जो नवम कक्षा में पढ़ता है और पिता किसी राज मिस्त्री के साथ मज़दूरी करते हैं। मीरा विद्यालय चली आती है। भाई दूसरी जगह, उच्च विद्यालय चण्डी पढ़ने चला जाता है और पिता भी मज़दूरी करने चले जाते हैं। 4:00 बजे छुट्टी के बाद मीरा विद्यालय से जब घर जाती तो उसे ढारस देने वाला कोई नहीं मिलता, न ही भाई और न ही पिता। भाई 2 घंटे बाद आता, तो पिता जी संध्या के बाद ही मिल पाते। मेरे मन में ये बात चलती रहती कि आखिर इस बच्ची की चुप्पी कब टूटेगी।

मैंने स्वयं पहली कक्षा में अपनी एक घंटी समय सारिणी में जोड़वाई, ताकि मैं मीरा से रोज मिल सकूं और उससे बातें कर सकूं। मैं उसके लिए कभी-कभी फल, चॉकलेट या बिस्किट लेते आता। एक छोटा-सा बाल लुभावन बैग और एक रंगीन बोतल उसे लाकर मैंने दिया। एक स्लेट और रंग-बिरंगे चॉक लाकर भी मैंने उसे दिया।

थोड़ा-थोड़ा वह मुझसे हिलने-मिलने लगी और मेरे प्रश्नों पर मौन व्रत 'हूं - हां" से तोड़ने लगी। कुछ शारीरिक प्रतिक्रिया से भी मेरे प्रश्नों का उत्तर देने लगी। मैं उसे रोजाना प्यार से पास बुलाता। मुझे भी उससे मिले बिना नहीं रहा जाता। उस बच्ची से मेरा भी अटूट भावनात्मक लगाव हो गया। उससे प्यार से बातें करता तो वह कुछ-कुछ खुलने लगी और कुछ दिनों बाद मुझ से कुछ-कुछ बोलने लगी। वह औरों से अभी तक बातचीत नहीं करती। मैं सभी बच्चों से बातें करता। सबसे कुछ न कुछ बोलवाता लेकिन फिर भी मीरा दूसरे बच्चों से बातचीत नहीं करती। मैं संपूर्ण शारीरिक प्रतिक्रिया (Total Physical Response) वाली गतिविधियां वर्ग-कक्ष में करवाता। उदाहरण के तौर पर 'सीट डाउन', स्टैंड अप-- सीट डाउन, स्टैंड अप। क्लपै योर हैंड--। स्नपै योर फिंगर---। सभी बच्चे बोलते और एक्शन करते। इस तरह से मीरा भी एक्शन करती। उसे भी मज़ा आने लगा और इस तरह वह बच्चों के साथ भी कुछ-कुछ बोलने में कंफर्टेबल होने लगी।

मैं बच्चों से समूह गान (Chorus) करवाता। वह भी उसमें हिस्सा लेती। उसका चेहरा जो पहले मुरझाए हुए रहता था, अब चमकने लगा।

अब मेरी मेहनत रंग लाने लगी। जब मैं हाव-भाव से कोई कविता पाठ करवाता तो वह भी उमगं-तरंग के साथ करती। अब वह अपने विद्यालय की गतिविधियों में भी भाग लेते हुए दिखाई देने लगी। मैदान में अपने सहपाठियों के साथ खेलती, प्रार्थना में अगली पंक्ति में खड़ी होती और प्रार्थना को दोहराने की कोशिश करती। इस तरह वह अब गुंगी गुड़िया नहीं रही बल्कि अब तो चुप में भी उसका मासमू-सा चेहरा कुछ कहता हुआ प्रतीत होता।

शायद वह मां के जाने का ग़म अब तक भूल नहीं पा रही है। शायद उसे घर पर माँ याद आती होगी लेकिन विद्यालय में वह दुःख से दूर हो जाती है। अब मेरे सवालों का कुछ-कुछ जवाब मिलने लगा है। मैं उसके प्रिय चीजों के बारे में बातें करता रहता। उसके भाई और पिताजी के बारे में बातें करता ताकि वह कुछ बोलती रहे। मैं निरंतर प्रयास, स्नेह और गतिविधियों के बल पर उसे मुख्यधारा से जोड़ने में सफल हुआ। उसका मौन व्रत को तोड़ने में समय, मेहनत और धैर्य लगा। जो कविता वह वर्ग-कक्ष में सुनी थी, वह उसे आत्मसात भी हो गयी। मुझे जब यह समझ में आया तो उससे कभी-कभी कविता सुना करता और उसकी ख़ूब प्रशंसा करता। वह बहुत ख़ुश होती। मेरे स्नेह को पाकर

उसे मुझ से काफी लगाव हो गया। फिर वह पढ़ने पर ध्यान देने लगी। वह मूक बच्ची अब वाचाल बन चुकी है। उसके चेहरे पर चमक और आंखों में आशा की किरणें नज़र आने लगी। मेरा अफसोस अब संतोष में बदल चुका है। एक शिक्षक के लिए क्या चाहिए, बच्चे ख़ुश तो शिक्षक ख़ुश।

छात्रों द्वारा शिक्षक का अनुकरण

- नेहा कुमारी

रा. स. हरावत राज उच्च माध्यमिक विद्यालय, गणपतगंज, सुपौल

आज भी याद है मुझे वो दिन जब मैंने विद्यालय में योगदान लिया और सभी रसोईया, अभिवावकों ने मुझे देख कर सोचा कि ये कम उम्र की पतली दुबली लड़की बच्चों को क्या संस्कार सिखा पाएगी, सबकी नजरों और फुसफुसाहट ने मुझे कर गुजरने को विवश कर दिया। और वो था बच्चों में नैतिक शिक्षा का विकास करना।

धीरे धीरे मैंने बच्चों से बात करना प्रारंभ किया और प्रतिदिन कुछ समय नैतिक शिक्षा को समर्पित कर दिया। इसे समझना इतना आसान तो नहीं था पर कहा जाता हैं कि शुरुआत तो कही से करनी ही पड़ती है। इसके लिए मैंने बच्चों के सामने खुद को भी वैसा ही प्रस्तुत किया क्योंकि जो वो देखते हैं उसको अनुकरण करते हैं। हमारा बोलना, चलना, पहनावा इन सबका असर उनके चरित्र पर पड़ता हैं। वर्ग कक्ष में उनके लड़ाई झगड़े को उदाहरण द्वारा हल किया और सही गलत में फर्क करना सिखाया। ये भी बताया कि हम जैसा व्यवहार करेंगे वैसा ही हमारे साथ भी होगा। हमारी मीठी वाणी बड़े से बड़ा कार्य करवा भी सकती हैं और रूखी वाणी कार्य बिगाड़ भी सकती हैं। हमारे व्यवहार के कारण ही लोग हमे पसंद और ना पसंद करते हैं। सच का साथ देना है और दिखावे की ओर नहीं जाना है। बच्चों को सिखाए कि जैसे आप विद्यालय में शिक्षक का सम्मान करें वैसे ही घर जा कर माता, पिता और आस पड़ोस के लोगों का भी सम्मान करें ताकि आप सभी के प्रिय बन जाए।

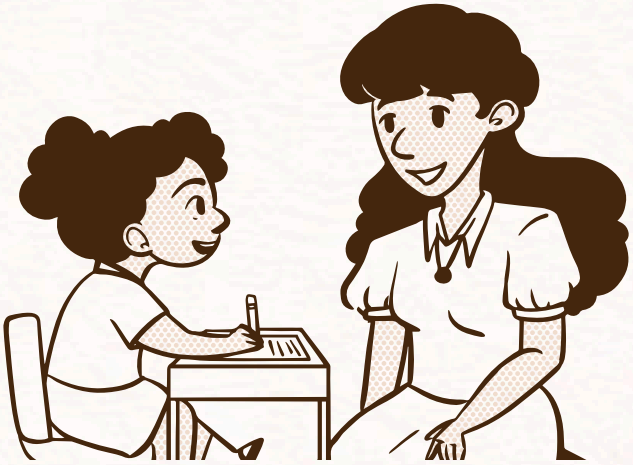

आज मेरा विद्यालय बदल गया पर मेरे द्वारा सिखाई गई बातें बच्चे आज भी करते हैं। घर से प्रणाम करके निकलते है और विद्यालय में भी सभी गुरुजनों और रसोईया को प्रणाम करते हैं। मैं कहीं भी कभी भी मिल जाऊं तो पैर छू कर प्रणाम करते हैं चाहे कितने ही बड़े हो गए बच्चे।

यह हैं एक शिक्षक की पूंजी, बच्चों को कुछ सिखाने के लिए अपना व्यक्तिव भी वैसा बनाना पड़ता हैं ताकि वे अच्छा अनुकरण कर पाएं।

कुछ रिश्ते शब्दों से परे होतें हैं

- चन्दन कुमार उर्फ मनीष अग्रवाल

उच्च माध्यमिक विद्यालय, कुमरगंज, मधेपुरा

कुछ रिश्ते शब्दों से परे होते हैं, और कुछ पलों की आवाजें जीवनभर की गूंज बन जाती हैं। आज का दिन मेरे शिक्षक जीवन की उन स्मृतियों में जुड़ गया है, जो जीवनभर मेरे हृदय में जीवित रहेंगी। "शिक्षक होना सिर्फ एक पेशा नहीं, वह एक आत्मीय रिश्ता है - जो बच्चों की आँखों से होकर आपके हृदय में उतर जाता है।"

मेरे शिक्षक जीवन की शुरुआत एक नवागत शिक्षक के रूप में थोड़ी झिझक, थोड़ी उत्सुकता और मन में बहुत सारे सपनों के साथ उत्क्रमित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, नरसिंहवाग, मधेपुरा से हुई। उस समय यह परिसर मेरे लिए केवल एक कार्यस्थल था, पर धीरे-धीरे यह मेरा परिवार बन गया। इस माध्यमिक विद्यालय में हिंदी शिक्षक के रूप में लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व योगदान किया था। यह मेरी पहली नियुक्ति थी, लेकिन यकीन मानिए, यह सिर्फ नौकरी नहीं थी, यह मेरी पहली "कक्षा" थी जीवन की - जहाँ मैंने न सिर्फ पढ़ाया, बल्कि खुद भी बहुत कुछ सीखा।

विद्यालय, घर से 40-45 किलोमीटर दूर था। इसी कारण कुछ महीने पहले दूरी और पारिवारिक जिम्मेदारियों को देखते हुए मैंने स्थानांतरण के लिए आवेदन किया था। स्थानांतरण की प्रक्रिया के बीच में हीं विभाग ने पारस्परिक स्थानांतरण पर सहमति दी, और संयोगवश मेरे घर के पास ही पारस्परिक स्थानांतरण हेतु शिक्षक मिल गए और हमदोनो ने एक दूसरे के साथ कार्यस्थल अदला-बदली के लिए आवेदन कर दिया और महज़ सात दिनों में स्वीकृति भी मिल गई। विभाग द्वारा विद्यालय में योगदान देने का पत्र मिलते ही मन विदाई के भाव से भर उठा।

14 अगस्त 2025 को मैंने इस विद्यालय अपना अंतिम अध्यापन दिवस पूर्ण किया। अगले दिन स्वतंत्रता दिवस की ध्वज-लहराती सुबह, 16 अगस्त की कृष्ण जन्माष्टमी की मधुर छुट्टी और 17 अगस्त का शांत रविवार- ये सब मानो एक बदलाव से पहले की अंतिम स्मृतियाँ थीं। फिर 18 अगस्त को, नई उम्मीदों और पुरानी यादों को साथ लेकर, मैंने नव-आवंटित विद्यालय में योगदान दिया।

घर के पास के विद्यालय में जाने की ख़ुशी तो थी लेकिन हृदय के किसी कोने में यह भी डर था कि क्या वह अपनापन फिर से मिलेगा। छात्रों को जब यह जानकारी मिली कि सर अब जा रहे है, सर का स्थानांतरण हो गया तो सबकी आंखें नम हो गयी।

15 अगस्त के स्वतंत्रता दिवस समारोह के बाद छात्र मेरे पास आकर अपने-अपने ढंग से स्नेह व्यक्त कर रहे थे। कोई रोते-रोते मेरी हथेलियों में प्यार से लाया हुआ उपहार रख रहा था, तो कोई पास खड़ा रहकर आँसू पोछ रहा था। उन उपहारों में वस्तु से अधिक बच्चों का निस्वार्थ प्रेम और अपनापन समाया था।

एक छात्र ने पूछा- "सर! क्या आप हमें कभी नहीं पढ़ाएँगे...?"

मेरे पास जवाब नहीं था, लेकिन एक मुस्कान थी... और शायद वह मुस्कान उनसे कह रही थी: "पढ़ाने से बढ़कर, तुम सबने मुझे पढ़ाया है-जीवन का सबसे सुंदर पाठ।"

एक शिक्षक की सबसे बड़ी उपलब्धि न कोई प्रमाणपत्र, न पुरस्कार, न ही प्रशासनिक प्रशंसा।

एक शिक्षक की सबसे बड़ी उपलब्धि है - जब बच्चे आपको जाते देख रोकने लगें, जाने न देने की ज़िद करें, और रोते हुए कहें कि 'सर, आप जैसे कोई नहीं।

सहयात्रा के वे पल...विदाई के इन भावपूर्ण क्षणों में कुछ चेहरे और यात्राएँ ऐसी हैं, जो बार-बार स्मृति में लौटती हैं। विद्यालय तक मेरी हर सुबह की यात्रा केवल दूरी तय करना नहीं था, वह अपने आप में एक जीवंत पाठशाला थी -जीवन के अनुभवों की।

घर से लगभग 30 किलोमीटर की यात्रा मैं बस से करता था, फिर शेष 15 किलोमीटर की दूरी विद्यालय के मेरे सहकर्मी कार्तिक जी के साथ तय होती थी। उनके साथ की गई वह यात्रा केवल मार्ग की साझेदारी नहीं थी - बल्कि मन की संगत थी। इन यात्राओं में कोई बड़ी बातें नहीं होती थीं- पर छोटी-छोटी बातों में एक विशेष आत्मीयता थी। कभी विद्यालय की व्यवस्थाओं को कैसे बेहतर बनाया जाए, कभी घर-परिवार और जीवन के उतार-चढ़ाव, तो कभी संघर्ष के बीते दिन - हमारी बातचीत का हिस्सा बनते।

कार्तिक जी से मेरी पहली मुलाकात उनके इस विद्यालय में योगदान के दिन ही हुई थी। एक साधारण औपचारिकता से शुरू हुआ रिश्ता धीरे-धीरे मित्रता के एक सुंदर बंधन में बदल गया। वह मित्रता अब शब्दों की नहीं, समझ की भाषा बोलती है। इन यात्राओं ने केवल रास्ते नहीं पार किए, बल्कि अनेक मौन क्षणों को भी स्वर दिया। टिफ़िन का स्वाद और चुप्पियों का संवाद...पहली पोस्टिंग का विद्यालय मेरे लिए सिर्फ एक नौकरी की शुरुआत नहीं

कुछ रिश्ते शब्दों से परे होतें हैं

- चन्दन कुमार उर्फ मनीष अग्रवाल

उच्च माध्यमिक विद्यालय, कुमरगंज, मधेपुरा

था, वह एक आत्मीय संसार था - जहाँ हर दिन कुछ नया सीखने को मिलता, और यह सीख केवल छात्रों से नहीं, सहकर्मियों से भी मिलती थी।

सुष्मिता मैम... उनका नाम लेते ही आज भी टिफ़िन की ख़ुशबू और अपनापन मन में उमड़ आता है। मध्यांतर में जब हम सब साथ बैठते, तो उनके टिफ़िन पर मानो हम सबका सहज अधिकार था। उनका स्नेह और सौम्यता ही ऐसी थी कि खाने के साथ-साथ वह अपनापन भी परोसती थीं। कभी-कभी लगता, जैसे वह डिब्बा किसी सहकर्मी का नहीं, माँ के हाथ की रसोई से आया कोई स्नेहभरा संदेश हो। हम सभी, बिना कहे ही, उस स्वाद और स्नेह में सम्मिलित हो जाते।

और सूरज जी - एकदम अपने नाम जैसे शांत, स्थिर और आत्मीय। कम बोलते थे, पर उनका मौन भी अपनेपन से भरा होता। जब कार्तिक जी छुट्टी पर होते, तो मैं सूरज जी के साथ ही विद्यालय आता-जाता ।कभी-कभी,जब शरीर थक जाता और मन भी बोझिल होता,तो मधेपुरा में उनका कमरा मेरे लिए किसी आरामगाह से कम नहीं होता था। चाय की प्याली, दो-चार बातें और एक सन्नाटा - जिसमें आराम भी था और भरोसा भी।

कुछ रिश्ते ताज़ा रोटी की तरह होते हैं - साधारण, गरम, पर जब बाँटे जाते हैं तो आत्मा तक को स्वाद देते हैं।

विद्यालय के पूर्व प्रभारी प्रधानाध्यापक सतीश सर का उल्लेख किए बिना यह संस्मरण अधूरा है। जब मैं इस विद्यालय में योगदान किया था उस वक़्त प्रभारी प्रधानाध्यापक के रूप में उनका सहज हास्य, सरल व्यवहार और नेतृत्व की स्पष्टता ने विद्यालय को केवल एक संस्था नहीं, एक परिवार बना दिया। उनका मज़ाकिया अंदाज़, गंभीर से गंभीर परिस्थिति को भी मुस्कान में बदल देता था।

विद्यालय के नए प्रधानाध्यापक ललन सर... विद्यालय में कार्यकाल के अंतिम महीनों में ही ललन बाबू का प्रधानाध्यापक के रूप में योगदान हुआ। उनका व्यक्तित्व ऐसा था कि औपचारिकता की कोई दीवार बीच में खड़ी नहीं होती थी। चेहरे पर हमेशा एक हल्की-सी मुस्कान, बोलचाल में सहजता, और हर किसी से सम्मानजनक व्यवहार - यही उनकी सबसे बड़ी पहचान थी।

वे न केवल प्रशासनिक कार्यों में कुशल थे, बल्कि मानवीय दृष्टिकोण से भी बेहद संवेदनशील थे। किसी भी शिक्षक या छात्र की समस्या को सुनना, तुरंत समाधान के लिए पहल करना, और हर परिस्थिति में सकारात्मक दृष्टिकोण रखना -यह उनकी कार्यशैली का हिस्सा था। सबसे खास बात, वे कभी 'प्रधानाध्यापक' बनकर आदेश नहीं देते थे, बल्कि 'वरिष्ठ सहकर्मी' बनकर सुझाव देते थे।

विद्यालय में मेरे साथ कार्यरत सभी सहकर्मियों ने केवल सहयोगी की भूमिका नहीं निभाई, बल्कि एक परिवार जैसा स्नेह, मार्गदर्शन और अपनापन दिया। उनके साथ बिताए पल अब स्मृति बन गए हैं-मौन समर्थन, मधुर मुस्कानें और साझा जिम्मेदारियाँ... जो जीवनभर साथ रहेंगी।

भले ही अब हम सभी भिन्न-भिन्न विद्यालयों में कार्यरत हैं, पर जो रिश्ता उन दीवारों के बीच बना, वह वर्षों तक जीवित रहेगा।

इन सहयात्रियों ने मुझे सिखाया कि विद्यालय केवल ईंट और गारे की इमारत नहीं होता,वह उन रिश्तों की जीवंत संरचना है, जो जीवन भर साथ चलती है।

यह सिर्फ विदाई नहीं थी... यह स्मृति की संधि थी।

मैं वहाँ शिक्षक बनकर गया था, पर लौटते समय एक पिता, एक मित्र, एक पथ-प्रदर्शक बन गया।

यह लेख एक शिक्षक की ओर से उस विद्यालय, उन दीवारों और उन बच्चों को समर्पित है,

जिन्होंने Chalk और Duster के बीच मेरे जीवन का सबसे सुंदर चित्र रचा।

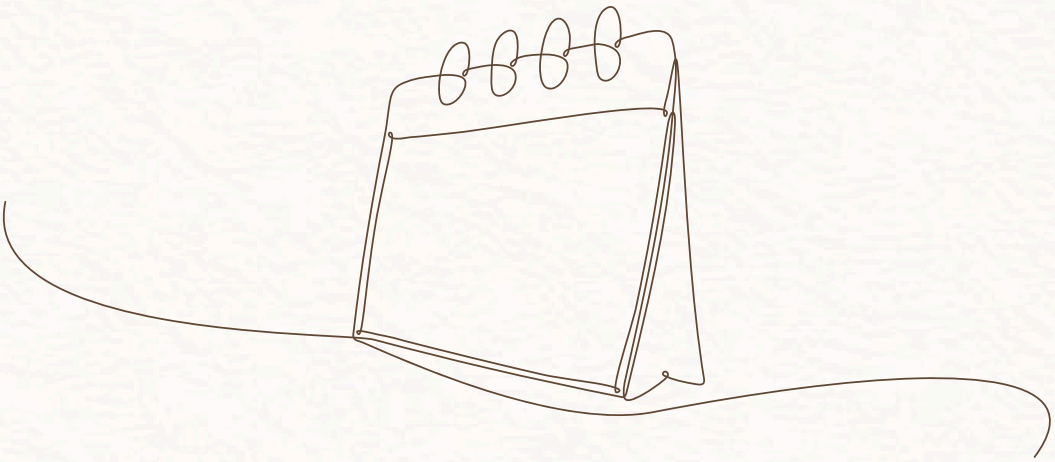

दिवस विशेष

राष्ट्रीय युवा दिवस : जागृत युवा, सशक्त राष्ट्र

- ओम प्रकाश

म० वि० दोगच्छी, भागलपुर

भारत के आधुनिक इतिहास में यदि किसी एक व्यक्तित्व ने युवाओं को सबसे अधिक आत्मविश्वास, साहस और दिशा दी है, तो वे हैं स्वामी विवेकानंद। उनका जन्म 12 जनवरी 1863 को कोलकाता में हुआ था। उनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। उनके पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता उच्च न्यायालय में वकील थे और माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक तथा संस्कारित विचारों वाली महिला थीं। स्वामी विवेकानंद के जन्मदिवस को भारत सरकार ने 1984 में राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में घोषित किया, जिसे पहली बार 1985 में मनाया गया। इसका उद्देश्य युवाओं को उनके विचारों से जोड़कर राष्ट्रनिर्माण के लिए प्रेरित करना था। भारत की चेतना को झकझोर देने वाले, आत्मगौरव का भाव जगाने वाले और युवाओं में नई ऊर्जा का संचार करने वाले महापुरुष स्वामी विवेकानंद केवल एक संन्यासी नहीं, बल्कि विचारों की वह ज्वाला थे, जिसने पूरे राष्ट्र को आत्मविश्वास से भर दिया। स्वामी विवेकानंद के जन्मदिवस को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाना इस बात का प्रतीक है कि भारत अपने भविष्य की जिम्मेदारी युवाओं के कंधों पर रखता है और उन्हें सही दिशा देने के लिए विवेकानंद के विचारों को पथप्रदर्शक मानता है।

स्वामी विवेकानंद का जीवन स्वयं में एक प्रेरणादायक यात्रा है। संघर्ष से साधना तक और साधना से सेवा तक। वे युवाओं को दुर्बलता, निराशा और हीनभावना से मुक्त करना चाहते थे। उनका स्पष्ट संदेश था, "तुम कमजोर नहीं हो, तुम्हारे भीतर असीम शक्ति है।" वे मानते थे कि किसी भी राष्ट्र की उन्नति का मार्ग युवाओं के चरित्र निर्माण, आत्मविश्वास और कर्मशीलता से होकर गुजरता है। उनके अनुसार युवा केवल उम्र से नहीं, बल्कि विचारों से युवा होना चाहिए। स्वामी विवेकानंद का जीवन केवल आध्यात्मिक साधना तक सीमित नहीं था, बल्कि वह तर्क, विज्ञान, दर्शन और सामाजिक चिंतन का अद्भुत संगम था। उन्होंने प्रेसीडेंसी कॉलेज, कोलकाता से शिक्षा प्राप्त की और दर्शन, इतिहास, पश्चिमी विज्ञान तथा तर्कशास्त्र का गहन अध्ययन किया। वे प्रारंभ में ईश्वर के अस्तित्व को लेकर संशय में थे। इसी जिज्ञासा ने उन्हें रामकृष्ण परमहंस तक पहुँचाया, जिनके सान्निध्य में उनका जीवन पूर्णतः परिवर्तित हो गया। रामकृष्ण परमहंस के देहांत के बाद नरेन्द्रनाथ ने संन्यास ग्रहण किया और "स्वामी विवेकानंद" के नाम से जाने गए।

स्वामी विवेकानंद को वैश्विक पहचान 1893 में अमेरिका के शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन से मिली। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि वे भारत से बिना किसी आधिकारिक आमंत्रण के, अत्यंत सीमित संसाधनों के साथ वहाँ पहुँचे। 11 सितंबर 1893 को दिया गया उनका भाषण, जिसमें उन्होंने "सिस्टर्स एंड ब्रदर्स ऑफ अमेरिका" कहकर संबोधन शुरू किया, आज भी विश्व इतिहास के सबसे प्रभावशाली भाषणों में गिना जाता है। उस भाषण में उन्होंने भारत की वेदांत परंपरा, धार्मिक सहिष्णुता और "सर्वधर्म समभाव" का संदेश पूरी दुनिया को दिया। इसके बाद वे लगभग चार वर्षों (1893–1897) तक अमेरिका और यूरोप में रहे और भारत की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक छवि को नई पहचान दिलाई।

स्वामी विवेकानंद केवल आध्यात्मिक गुरु ही नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक सुधारक भी थे। उन्होंने स्पष्ट कहा कि गरीब, शोषित और वंचित वर्ग की सेवा ही सच्ची ईश्वर-सेवा है। इसी विचार को साकार करने के लिए उन्होंने 1 मई 1897 को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। आज रामकृष्ण मिशन शिक्षा, स्वास्थ्य, आपदा राहत और समाजसेवा के क्षेत्र में भारत ही नहीं, बल्कि विश्वभर में सक्रिय है। यह एक ठोस ऐतिहासिक प्रमाण है कि विवेकानंद के विचार केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं रहे, बल्कि संस्थागत रूप लेकर समाज में उतरे।

स्वामी विवेकानंद की शिक्षा-दृष्टि आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। वे ऐसी शिक्षा के पक्षधर थे जो रोजगार के साथ-साथ चरित्र, साहस और संवेदनशीलता का निर्माण करे। ऐसी शिक्षा चाहते थे जो केवल डिग्री न दे, बल्कि चरित्र निर्माण, आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता पैदा करे। उनका मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर छिपी पूर्णता को जाग्रत करना है। वे ऐसे युवाओं का निर्माण चाहते थे जो मजबूत शरीर, दृढ़ मन और करुणामय हृदय वाले हों। वे उनका प्रसिद्ध कथन-

"शिक्षा वह है, जिससे मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास हो।"

आज की राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों के मूल भाव से भी जुड़ता दिखाई देता है। वे शारीरिक रूप से मजबूत, मानसिक रूप से निर्भीक और नैतिक रूप से दृढ़ युवाओं का निर्माण चाहते थे।

राष्ट्रीय युवा दिवस : जागृत युवा, सशक्त राष्ट्र

- ओम प्रकाश

म० वि० दोगच्छी, भागलपुर

स्वामी विवेकानंद का निधन 4 जुलाई 1902 को मात्र 39 वर्ष की आयु में हो गया, लेकिन इतने कम समय में उन्होंने जो वैचारिक विरासत छोड़ी, वह सदियों तक युवाओं को मार्गदर्शन देती रहेगी। महात्मा गांधी से लेकर सुभाष चंद्र बोस तक, अनेक राष्ट्रीय नेताओं ने स्वीकार किया कि विवेकानंद के विचारों ने उनके राष्ट्रवादी चिंतन को गहराई दी।

राष्ट्रीय युवा दिवस का उद्देश्य केवल एक तिथि मनाना नहीं है, बल्कि युवाओं को यह याद दिलाना है कि भारत की लगभग 65% जनसंख्या 35 वर्ष से कम आयु की है। यह तथ्य स्वयं सिद्ध करता है कि देश का भविष्य युवाओं के हाथ में है। स्वामी विवेकानंद युवाओं को आलस्य, डर और हीनभावना से मुक्त करना चाहते थे। उन्होंने बार-बार कहा कि कमजोरी सबसे बड़ा पाप है। उनका यह विचार आज के प्रतिस्पर्धात्मक और चुनौतीपूर्ण समय में और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है।

राष्ट्रीय युवा दिवस हमें यह आत्ममंथन करने का अवसर देता है कि आज का युवा किस दिशा में जा रहा है। तकनीक, प्रतिस्पर्धा और भौतिक सफलता के इस दौर में यदि युवा विवेकानंद के विचारों से जुड़ जाए, तो वह न केवल सफल बल्कि सार्थक भी बन सकता है। स्वामी विवेकानंद ने युवाओं को केवल अपने लिए नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए जीना सिखाया। सेवा, त्याग और कर्तव्य को उन्होंने जीवन का मूल मंत्र बताया। आज जब समाज नैतिक मूल्यों के क्षरण, असहिष्णुता और दिशाहीनता जैसी चुनौतियों से जूझ रहा है, तब स्वामी विवेकानंद के विचार प्रकाशस्तंभ की तरह मार्ग दिखाते हैं। उनका जीवन हमें सिखाता है कि आत्मविश्वास, अनुशासन और राष्ट्रभक्ति के बिना कोई भी प्रगति स्थायी नहीं हो सकती।

आत्मविश्वासी, चरित्रवान और सेवा-भाव से युक्त युवा ही सशक्त भारत की नींव रख सकते हैं। यही स्वामी विवेकानंद का सपना था और यही युवा दिवस का वास्तविक उद्देश्य।

राष्ट्रीय युवा दिवस का वास्तविक अर्थ तभी साकार होगा, जब युवा केवल स्वामी विवेकानंद को याद न करें, बल्कि उनके विचारों को अपने जीवन में उतारें। जागृत युवा ही सशक्त राष्ट्र की नींव होता है, और स्वामी विवेकानंद उस नींव के सबसे मजबूत स्तंभ हैं।

Dr. Sarvepalli Radhakrishnan

- Ashish Kumar Pathak

Middle School Sarha Dharhara, Munger

Dr. Sarvepalli Radhakrishnan was born in a Telugu speaking family in Thiruttani, Tamilnadu. Father worked as a subordinate revenue official for a local Zamindar, indicating a relatively humble and modest status background. Despite financial constraints family valued education and he was able to pursue his academic interests through scholarships.his upbringings, persistence and academic achievements ultimately led him to become what he is known for today.

Born on September 5, 1888, to a Telugu Brahmin family, studied philosophy at Madras Christian College, where he developed a strong interest in comparative western and Indian philosophy. Ultimately he completed his masters in philosophy with a Thesis on "The ethics of the vedanta and it's Metaphysical Presupposition."

Taught Philosophy at University of Mysore and University of Calcutta.Authored over 50 books on philosophy, religion and education. He held prestigious positions such as King George v chair of Mental and Moral science at the University of Calcutta and Spalding professor of eastern Religions and ethics at world famous Oxford University.

He Advocated for Advait Vedanta, believed in concept of "The Abheda and emphasized the role of education in shaping individuals, Society and Nation."

Received India's highest civilian award, The Bharat Ratna,in 1954. He was nominated for Nobel prize in literature 16 times and Nobel peace prize 11 times and was knighted by British government in 1931.

He was known for championing traditional Indian culture including eating with hands. He believed this practice rooted in Vedic science, activates the five elements in the body-space, air, fire, water and earth represented by five fingers, which aids in digestion. Frequently ate food on Banana leaves or on the earth, which was indirectly related to keeping house super clean. In fact he even taught them British PM Churchill about vedic science of eating with hands during a dinner meeting. He preferred using fingers over cutlery, highlighting the significance that a person once a Teacher, is always a simple person he should be.

He served as Ambassador to then Soviet union from 1949-52, Vice President of India from 1952-1962, President of India from 1962-1967, promoting democracy, cultural preservation and Intellectual growth as and when possible. It was his personal request that his birthday be celebrated as Teachers Day, which is now observed on September 5 in India. He Donated one-fourth of his salary to PMs Natural Relief fund showcasing his commitment to giving back to the beloved nation.

His Scholarly aura was such that the British Queen came to The Railway station to receive such a simple man. His life was marked by a deep commitment to education, philosophy and public service.His legacy continues to inspire generations of students, teachers and leaders in India and beyond.

कीमती उपहार (शिक्षक दिवस)

- लवली कुमारी

उत्क्रमित मध्य विद्यालय अनूपनगर, बारसोई, कटिहार

आज विद्यालय में काफी चहल- पहल थी। बच्चे काफी खुश दिखाई दे रहे थे, कारण कल शिक्षक दिवस था। सभी बच्चे शिक्षक दिवस की तैयारी में जुट गए थे। सभी एक दूसरे को अपने-अपने गिफ्ट के बारे में जानकारी दे रहे थे। बच्चे बता रहे थे कि मेरे पास तो बहुत पैसे हैं मैं तो सर को कुछ भी दे सकता हूं। एक दूसरे को सभी हीन भावना से देख रहे थे। उन्हें ऐसा लग रहा था कि शिक्षक सिर्फ मुझे ही प्यार करें बाकी किसी को नहीं इसलिए सबसे अच्छा गिफ्ट दे करके उनको अपनी और कर लें।

पिंकी एक बहुत गरीब घर की लड़की थी। वह भी शिक्षक दिवस पर सर को कुछ उपहार देना चाहती थी पर सभी बच्चे उसका मजाक उड़ा रहे थे। अरे! पिंकी, तू क्या देगी तेरे पास तो पैसे ही नहीं है, सर तो तुझे दूर से ही भगा देंगे। सभी बच्चे ज़ोर-ज़ोर से ठहाका लगाने लगे।

उसने कुछ नहीं कहा, वह घर आ गई। घर आकर उसने सर के नाम एक प्यार भरा खत लिखा और कक्षा के सारे बच्चों की तस्वीर बनाई जिसमें सभी बच्चे एक साथ मिलकर सर को फूल और एक पौधा भेंट कर रहे हैं।

दूसरे दिन पिंकी भी अपने उपहार के साथ विद्यालय आ पहुंची। इधर सभी बच्चे अपने-अपने उपहार में नाम के साथ अपने हाथ में लिए खड़े थे कि मेरे शिक्षक आएंगे तो उनका स्वागत करूंगा। कुछ देर बाद विजय सर कक्षा में आए आते ही सारे बच्चों ने उनका अभिवादन किया। पिंकी अपने उपहार को छुपा कर रखी हुई थी। उसे ऐसा लग रहा था कि मेरा उपहार तो बहुत छोटा है, पता नहीं सर लेंगे भी या नहीं। कारण, बच्चे उसके मन में गलत बातों को भर दिये थे।

सर के क्लास में आते ही सबने ताली बजाई पर धक्का-धुकी में पिंकी के हाथ से उसका उपहार नीचे गिर गया। तभी सर की नजर उस पर पड़ गई, उन्होंने पिंकी के उपहार को उठा लिया और उठाते ही बहुत खुश होकर कक्षा में आकर बोले- "वाह इतना खूबसूरत उपहार किसने दिया है।"

तभी क्लास में बच्चे शोर मचाने लगे सर हमारे उपहार देखिए बहुत खूबसूरत और कीमती है। हमारे उपहार के सामने तो यह कुछ भी नहीं है। आप हमारा उपहार देखेंगे तो खुश हो जाएंगे। तभी सारे बच्चे अपने-अपने उपहार लाकर सर को देना शुरू कर दिए। सर ने देखा, सचमुच में बहुत महंगी उपहार बच्चों ने खरीदा था। तभी सर ने कहा कि आप लोगों ने तो मेरा सौदा ही कर दिया। उपहार तो मुझे दिया ही नहीं सभी बस एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए बहुत महंगी-महंगी उपहार लेकर आए। पर पिंकी को देखो उसने मुझे बहुत कीमती उपहार दिया है। वह कितना मुझसे और तुम लोगों से स्नेह करती है। कितनी मेहनत की है इस बच्ची ने रात भर ड्राइंग किया और इतना प्यार भरा खत भी लिखा। इसने सभी बच्चों को एक साथ मिलकर रहने को कहा और देखो पर्यावरण सुरक्षा के लिए भी एक पौधा उपहार में दिया। बच्चों ने सचमुच अपनी तस्वीर जब देखा तो सारे बच्चों को बुरा लगा। उसने पिंकी से क्षमा मांगी कहा सच में हम लोगों ने सिर्फ अपने ही बारे में सोचा पर पिंकी ने तो सारे बच्चे मिलकर एक साथ आनंदपूर्वक रहे ये सोच अपनाई। बच्चे आज काफी ख़ुश हुए उन्हें एक आज अच्छी सीख मिल गई थी। सबके साथ समान व्यवहार करने का और सबके साथ मिलकर रहने का। सभी बच्चे पिंकी को लेकर खेलने लगे और सबने मिलकर सर के साथ पौधा लगाया और मिठाइयां खाई।

शिक्षक का महत्व

- मनु कुमारी

प्राथमिक विद्यालय दीपनगर बिचारी, राघोपुर, सुपौल

हमारे जीवन में शिक्षक का बहुत हीं बड़ा स्थान है। शिक्षक अर्थात जिसमें शिक्षा हो, क्षमा हो करूणा हो। इस संसार में शिक्षक का पद सर्वोच्च है, यह बातें शास्त्र-सम्मत भी हैं।

जब हम मां के गर्भ में रहते हैं तब हम हाथ पैर हिलाते हैं, सांस लेते हैं, घूमते फिरते हैं। संसार की बातें भी सुनते हैं वहां हम परमात्मा रूपी शिक्षक के सानिध्य में सब करते हैं और जब जन्म होता है तब परिवार रूपी प्रथम पाठशाला में माता पिता रूप में गुरु हमें अच्छी आदतें, शिष्टाचार सुचि आचार, प्रेम आदर सम्मान संस्कृति और संस्कार की सीख देती है। हम प्रकृति रूपी शिक्षक जैसे फूल, भौंरें, वृक्ष, हवा, जल, आकाश, धुंआ, लता, नदी, पहाड़, झरनें, जलधारा, चंद्र, सूर्य, पृथ्वी आदि से ऐसी-ऐसी बातें सीखते हैं जो हमें मानवता के उच्च शिखर पर ले जाती है। जितने भी बड़े-बड़े सफल लोग हुए, महापुरुष एवं महाज्ञानी हुए सबने गुरु की महत्ता का बखान किया है।

'गु' का अर्थ होता है- अन्धकार और 'रू' का अर्थ होता है- प्रकाश। जो हमारे अन्दर के अज्ञान रूपी अन्धकार को हटाकर हममें ज्ञान रूपी प्रकाश भरते हैं वह गुरु होते हैं। शिक्षक हमें "स्व" से परिचय करवाते हैं। शिक्षक सिर्फ शिक्षक नहीं वह बच्चों के सबसे अच्छे मार्गदर्शक और मित्र भी होते हैं। बच्चे राष्ट्र के भविष्य होते हैं तो शिक्षक राष्ट्र निर्माता। शिक्षक बच्चों के अन्दर नैतिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का संचार करते हैं। वह बच्चों को सिर्फ पाठ नहीं पढ़ाते बल्कि विभिन्न समस्याओं एवं चुनौतियों का सामना करने, समस्याओं का समाधान ढूंढने, तर्क करने, चिंतन करने एवं सही समय पर उचित निर्णय लेने हेतु सक्षम बनाते हैं।

बच्चे शिक्षक का अनुकरण करते हैं। वह सबसे ज्यादा अपने शिक्षक से प्रभावित होते हैं और उन्हीं के तरह बनना चाहते हैं। इसलिए हम शिक्षकों को सदाचारी होना चाहिए। हम समय के पाबंद हों। हमारा चरित्र साफ और पवित्र होना चाहिये। हम अच्छे रहेंगे तभी हम अच्छे समाज का निर्माण कर पायेंगे। शिक्षक को स्वाध्यायी एवं अपने पेशे से प्रेम होना चाहिए। सीखने की कोई उम्र नहीं होती है। पढ़ना, चिंतन करना, नवाचार का प्रयोग, नये उपागम, नयी तकनीक नये शोध से हम बच्चों के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य प्राप्त करने में निश्चित रूप से सफल हो जायेंगे। गुरु और पारस में बस फर्क इतना होता है कि पारस के स्पर्श से लोहा कुंदन बन जाता है और गुरु अपने समान या अपने से भी विशेष अपने शिष्यों को बना देते हैं।

एक शिक्षक के रूप में बच्चों के प्रति हमारा बहुत बड़ा कर्तव्य है जिसे निष्ठापूर्वक निभाना हम सबकी जिम्मेदारी है। बच्चे विभिन्न परिवेश, समाज से आते हैं। विविधता हमारी ताकत है। विविधतापूर्ण माहौल में सबके साथ मिलकर रहना एक समतामूलक समाज की स्थापना करना बच्चों के उत्तम चरित्र का निर्माण करना उन्हें स्व से अवगत कराना यही हमारा ध्येय है।

हमारे देश के प्रथम उपराष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने एक शिक्षक के पद से राष्ट्रपति तक का सफर तय किया। आज उनके जन्मदिन को हम सभी शिक्षक दिवस के रूप में मनाते हैं।

डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का कहना था - "शिक्षक देश के सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्क होते हैं और उन्हें छात्रों में नैतिक बौद्धिक व आध्यात्मिक मूल्यों का संचार करना चाहिए। उनका मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य एक स्वतंत्र और रचनात्मक व्यक्ति का निर्माण करना है जो प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना कर सके। शिक्षकों का कार्य केवल ज्ञान देना नहीं बल्कि छात्रों में जिज्ञासा, आलोचनात्मक सोच और मानवतावाद का विकास करना है।"

हम सभी डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के आदर्शों पर चलें उनकी शिक्षा एवं ज्ञान को अपने जीवन में उतारें,बच्चों को सिखाने हेतु सदा तत्पर रहें ,शिक्षक दिवस यही याद दिलाता है।

महाजनों येन गत: स: पन्था:।

अर्थात महापुरुष जिस रास्ते से गये हैं वही रास्ता है हमें उसी पर चलना है। अंत में समस्त गुरूजनों को मेरा सादर प्रणाम।

शिक्षक वह है जो मस्तिष्क के बंद दरवाजे को खोल दे

- गिरीन्द्र मोहन झा

+२ भागीरथ उच्च विद्यालय, चैनपुर-पड़री, सहरसा

आज के शिक्षा की हकीकत यह हो चुकी है कि सरकारी विद्यालयों में वैसे बच्चे उपस्थिति के साथ पढ़ रहे हैं, जिनके अभिभावक निजी विद्यालयों में पढ़ाने में अक्षम हैं। कुछ बच्चों का नाम अंकित इसलिए है कि उन्हें सरकारी प्रमाण-पत्र मिल जाए। निजी विद्यालयों की हाई-फाई जितनी अधिक, शिक्षा की गुणवत्ता उस अनुपात में बहुत कम। अभिभावकों का ध्यान रखना विशेष आवश्यक होता है। मुझे एक पदाधिकारी ने कहा था, "पढ़ता कॉलेज नहीं, प्रोफेसर नहीं, माहौल नहीं, पढ़ता है स्टूडेंट।"

आज के समय की मांग है कि शिक्षकों तथा अभिभावकों को भी बच्चों की शिक्षा के साथ-साथ उसके सर्वांगीण विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

शिक्षक के तीन महत्वपूर्ण गुण- विषय का गंभीर ज्ञान (content knowledge), सम्प्रेषण कौशल (communication skill) और शिक्षण-शास्त्र (Pedagogy) उन्हें निरंतर अपने विषय में योग्यता के साथ दक्षता और शिक्षण-कौशल को बढ़ाने की आवश्यकता होती है।

अनुशासन बहुत आवश्यक है। मैंने अनुभव किया है कि आपके पास कक्षा-कक्ष में कंटेंट डिलीवर करने के लिए है, तो बच्चे स्वयं ही अनुशासित रहते हैं। इसके लिए पहले तैयारी की आवश्यकता हो जाती है।

शिक्षक के अनुशासन और डांट में भी विद्यार्थियों के लिए जीवन-संदेश निहित होता है।

कबीरदास के शब्दों में, "गुरु कुम्हार शिष कुम्भ है, गढि गढि काढै खोट। अन्तर हाथ सहारा दे बाहर बाहै चोट।।"

गुरु शब्द का अर्थ ही है – भारी। जो ज्ञान, अनुभव, विद्वत्ता और ईश्वरीय साधना में उच्चतर हो, वही गुरु है।

शिक्षक, वकील और चिकित्सक का जीवन-पर्यन्त अध्ययनशील रहना आवश्यक है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में, "एक शिक्षक वास्तव में तभी शिक्षण कर सकता है, जब वह स्वयं अध्ययनशील रहता है। एक जलता हुआ दीपक ही दूसरे को प्रज्ज्वलित कर सकता है।"

NEP-2020 में बहुत सारी ऐसी बातों का उल्लेख है जिनके अनुपालन से शिक्षा का विकास निरंतर हो रहा है। Mentors और Mentee अपनी भूमिका अच्छे ढंग से निभा रहे हैं। विद्यार्थियों को intelligent से पहले diligent और curious होना आवश्यक होता है। Genius से पहले पढ़ाई के लिए conscious होना आवश्यक होता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जापान की घोर अवनति हुई। सर्वविदित है कि 6 अगस्त, 1945 को जापान के हिरोशिमा शहर पर और 9 अगस्त, 1945 को नागासाकी शहर पर क्रमशः लिटिल बाय और फैटमैन नामक परमाणु बम गिराया गया। जापान के अभ्युदय, उत्थान और उन्नति में वहां के शिक्षकों की महती भूमिका रही है। समय-प्रतिबद्धता, कार्यसंस्कृति, आत्मसम्मान, उत्तरदायित्व के प्रति प्रतिबद्धता और व्यवस्था द्वारा हर पग पर उनको यह आभास दिलाया गया कि वे ही राष्ट्र के निर्माता हैं, वे भविष्य के कर्णधार तैयार कर रहे हैं। उनसे व्यक्ति और व्यक्तित्व निर्माण के जो तत्व बच्चे सीख कर जाएंगे, वे बड़ी-बड़ी शोधशालाओं, अस्पतालों, प्रशासनिक कार्यालयों में भी कुछ वर्ष बाद दिखायी देंगे।

आज जापान में कोई अपने कार्यस्थल पर विलंब से नहीं पहुंचता है। भारत के अध्यापक यदि चाहें तो कुछ वर्षों के अंतराल में यहां भी यह स्थिति आ सकती है। राष्ट्र निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण दायित्व निर्वाह शिक्षकों को ही करना है। समाज में नैतिकता और मानवीय मूल्यों की स्वीकार्यता भी अध्यापकों के अनुकरणीय आचरण से ही आएगी।

"शिक्षकों की साख अवश्य संभाली जाय।"

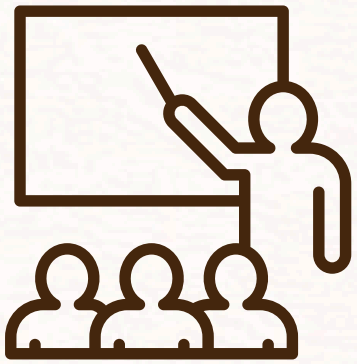

राजा राममोहन राय : आधुनिक भारत के अग्रदूत

- सुरेश कुमार गौरव

उ.म.वि.रसलपुर, फतुहा, पटना

प्रस्तावना: भारत के नवजागरण की जब भी चर्चा होती है, राजा राममोहन राय का नाम सम्मानपूर्वक लिया जाता है। वे न केवल एक विचारक थे, बल्कि एक कर्मठ समाजसुधारक, पत्रकार, शिक्षाविद् और भारत को आधुनिकता की दिशा में अग्रसर करने वाले महान व्यक्तित्व भी थे। उन्होंने भारत की जड़ता को तोड़कर उसमें चेतना का संचार किया और सती प्रथा जैसे कुप्रथाओं के विरुद्ध ऐतिहासिक संघर्ष किया।

जीवन परिचय: राजा राममोहन राय का जन्म २२ मई १७७२ को पश्चिम बंगाल के हुगली जिले के राधानगर गाँव में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनके पिता रामकांत राय एक संस्कृत विद्वान थे और परंपरागत धार्मिक विश्वासों में विश्वास रखते थे। राममोहन राय की शिक्षा संस्कृत, फारसी, अरबी, हिंदी और अंग्रेज़ी में हुई। उन्होंने वेद, उपनिषद, कुरान और बाइबल का गहन अध्ययन किया जिससे उनके विचारों में सार्वभौमिकता और विवेक की भावना आई।

सामाजिक सुधारक की भूमिका: राजा राममोहन राय ने भारतीय समाज में फैली अनेक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठाई। वे मानते थे कि अंधविश्वास, जात-पात, स्त्री-शोषण और धार्मिक पाखंड समाज के पतन के मूल कारण हैं। उन्होंने निम्नलिखित सुधारों की दिशा में ऐतिहासिक कार्य किए:

1. *सती प्रथा का उन्मूलन :* उन्होंने सती प्रथा के विरोध में व्यापक जनमत तैयार किया। उनके अथक प्रयासों के फलस्वरूप १८२६ में लॉर्ड विलियम बेंटिक ने सती प्रथा को कानूनी रूप से समाप्त कर दिया।
2. *बाल विवाह एवं बहुपत्नी प्रथा के विरोधी :* उन्होंने बाल विवाह, बहुपत्नी प्रथा और स्त्रियों की उपेक्षा के विरुद्ध स्पष्ट दृष्टिकोण अपनाया और नारी शिक्षा का समर्थन किया।
3. *धार्मिक पाखंड के विरुद्ध आंदोलन :* उन्होंने मूर्ति पूजा, कर्मकांड और अंधविश्वास के विरोध में प्रबल तर्क प्रस्तुत किए और वेदों व उपनिषदों की मूल आत्मा को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया।

शिक्षा के क्षेत्र में योगदान: राजा राममोहन राय ने शिक्षा को सामाजिक जागरूकता का मूल स्तंभ माना। उन्होंने आधुनिक शिक्षा पद्धति को भारत में लागू करने के लिए कई प्रयास किए:

- १८१७ में हिंदू कॉलेज (कोलकाता) की स्थापना में योगदान।
- १८२२ में एंग्लो-हिंदू स्कूल की स्थापना, जिसमें अंग्रेजी, विज्ञान, गणित और भौतिकी जैसे विषयों को स्थान मिला।
- संस्कृत कॉलेज में विज्ञान और दर्शन जैसे विषयों की पढ़ाई का समर्थन किया।

प्रेस एवं पत्रकारिता में योगदान: उन्होंने भारतीय समाज को जागरूक करने के लिए पत्रकारिता को माध्यम बनाया। उनके प्रमुख पत्र-पत्रिकाएं थीं:

- संवाद कौमुदी (बंगाली)
- मिरात-उल-अखबार (फारसी)
- इन पत्रों के माध्यम से उन्होंने सामाजिक और धार्मिक विषयों पर जनचेतना फैलाने का कार्य किया।

ब्रह्म समाज की स्थापना: राजा राममोहन राय ने १८२८ में ब्राह्म समाज की स्थापना की। इसका उद्देश्य था— एकेश्वरवाद का प्रचार, सामाजिक सुधार, जातिवाद का खंडन और स्त्रियों की स्थिति को सशक्त करना। यह आंदोलन आगे चलकर आधुनिक भारत के सामाजिक सुधारों की नींव बना।

राजनैतिक दृष्टिकोण और इंग्लैंड यात्रा:

वे पहले भारतीय थे जिन्होंने ब्रिटिश संसद में भारतीय अधिकारों के लिए आवाज़ उठाई। वे १८३० में इंग्लैंड गए और वहाँ ब्रिटिश सरकार से भारतीय प्रशासन में सुधार, प्रेस की स्वतंत्रता और भारतीयों के अधिकारों की सुरक्षा की माँग की।

निधन: राजा राममोहन राय का निधन २७ सितंबर १८३३ को इंग्लैंड के ब्रिस्टल नगर में हुआ। वे वहीं पंचतत्व में विलीन हो गए, लेकिन उनके विचार आज भी भारतीय चेतना में जीवित हैं।

उपसंहार: राजा राममोहन राय ने एक ऐसे युग का सूत्रपात किया, जहाँ विवेक, तर्क और मानवता को आधार मानकर समाज को जाग्रत किया गया। वे केवल एक सुधारक नहीं, बल्कि आधुनिक भारत के निर्माता थे। उनका जीवन हर युग के लिए एक प्रेरणा है।

स्मरण छठ घाट की

- अरविंद कुमार

म० वि० रघुनाथपुर गोठ , भरगामा, अररिया

रात के दस बजे थे। दिल्ली स्टेशन पर भारी भीड़ जमा थी। ट्रेन के इंतजार में कोई सीढ़ी पर बैठा था तो कोई बेंच पर जिसे जगह नहीं मिली थी वो नीचे पन्नी बिछाकर लेटे थे। इसमें सबसे ज्यादा बिहारी मजदूरों की संख्या थी, जो छठ पर्व में घर लौट रहे थे। भरगामा का मजदूर विकास अपने गांव के ही दोस्त रंजन को स्टेशन छोड़ने आया था। पर्व में घर लौटने की खुशी से रंजन का चेहरा खिला हुआ था, बिल्कुल ओस में नहलाये हुए गुलाब की पंखुड़ी की तरह....।

"हो.. चलो..न.. विकास.. तुम.. भी..अरे..किसी..तरह.. जेनरल..में...लटक..फटक..कर..घर..चले..जाएंगे..दोनों.. आदमी.."

"नहीं..यार.."

"बड़ी..मुश्किल..से..काम..मिला..है..छठ..में..घर.."

"चलें..गये..तो.. ठिकेदार..काम..से..हटा..देगा..।" विकास के स्वर में उदासी थी।

"ठीक है, रंजन तब हम चलते हैं, अच्छे से जाना।"

इतना कहकर विकास वापस अपने क्वार्टर के लिए निकल पड़ा। मगर स्टेशन पर ढेरों मोबाइल में बजते छठ पर्व का गीत सुनकर उनकी आंखें डबडबा आई। पैर मन भर भारी लगने लगे। उसे याद आने लगा अपना गांव, उसकी हरियाली, छठ घाट को अपने हाथ से सजाना, मां के हाथ का बना ढेकवा, पूरी, पकवान, सूप से सजी डाला को लेकर पैदल घाट तक पहुंचना, छठ ब्रती मां-बहनों की लम्बी कतारों के बीच छठ की सुमधुर गीत और टयुब लाइट की दुधिया प्रकाश में नहलाता हुआ पूरे घाट का विहंगम दृश्य, बच्चों की खूशी, पटाखों की आवाजें।

तभी उसके फोन की घंटी ने उसका तंद्रा भंग किया।

"हेलो"

"हां बोलो"

दूसरी तरफ उसकी पत्नी सुलोचना लाइन पर थी, उसके साथ ही उसके बच्चें भी मां का आंचल खिंच रहे थे उन्हें भी अपने पिताजी से बात करने की बड़ी जल्दी पड़ी थी।

"पैसा भेज दिये है रंजन के मार्फत, छठ का सब समान ख़रीद लेना, मां हाथ उठाएगी तो उनके लिए एक सूती साड़ी खरीद लेना।"

"उहं! मोबाइल कैसे झपटता है, इ छौरा बात भी नहीं करने देता है, लो तुम्हीं बात करो। सुलोचना खीजते हुए फोन अपने बेटे रमन को थमा दी।"

"बाबा...फटक्का के लिए पैसा भेजिये, घाट पर फोड़ेंगे।"

"अच्छा-अच्छा ठीक है, पैसा भेज दिये है कल खरीद लेना।

"अभी हम भीड़ में है, बस पकड़ रहे है , फ़ोन रखो क्वार्टर पहुंचते हैं, तब करना।"

विकास अपने क्वार्टर के लिए बस पकड़ चुका था, शरीर बस में थी मगर आत्मा घर पर थी । उसने रुमाल निकालकर अपने आंसू पोंछे, फिर खिड़की से बाहर शुन्य में कुछ निहारने लगा मानो खूद को दिलासा देने की कोशिश कर रहा हो। विकास को देखकर ऐसा लग रहा था मानो छठ बिहार का सिर्फ पर्व ही नहीं बल्कि उसका इमोशन भी है।

प्रथम भारतीय महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले

- हर्ष नारायण दास

म० विद्यालय घीवहा, फारबिसगंज, अररिया

सावित्रीबाई फुले का जन्म 3 जनवरी 1831 ईस्वी को महाराष्ट्र के सतारा जिले के नायगॉव में हुआ था।इनके पिता का नाम खन्दोजी नैवेसे और माता का नाम लक्ष्मीबाई था। वे स्वयं भारत की पहली महिला शिक्षिका बनी और कई विद्यालयों की स्थापना की। सावित्रीबाई फुले जी जातिगत भेदभाव और छुआछूत के खिलाफ मुखर थी।उन्होंने समाज के दबे कुचले वर्गों के उत्थान के लिए शिक्षा को सबसे बड़ा माध्यम बनाया। 9 साल की उम्र में 1840 में ज्योतिराव फुले से उनका विवाह हुआ।उन्होंने"सत्य शोधक समाज" के माध्यम से दलितों, महिलाओं और शोषितों के अधिकारों की वकालत की।

सावित्रीबाई फुले में बचपन से ही साहस दृढ़ता और समाज सुधार की भावना विद्यमान थी। सावित्रीबाई फुले शादी के समय निरक्षर थी। लेकिन उनके पति ज्योतिबा फुले ने उन्हें घर पर पढ़ाया और शिक्षा दिलाई। वे भारत की पहली प्रशिक्षित महिला शिक्षक बनी, जिन्होंने पुणे के नॉर्मल स्कूल से प्रशिक्षण लिया और 1940 के दशक में प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद उच्च शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी भाग लिया जिससे वे भारत की पहली महिला शिक्षक और प्रधानाध्यापिका बनी। सावित्रीबाई फुले के संरक्षक, गुरु और समर्थक ज्योतिराव फुले थे।

सावित्रीबाई फुले ने अपने जीवन को एक मिशन की तरह से जिया, जिसका उद्देश्य था विधवा विवाह करवाना, छुआछूत मिटाना, महिलाओं की की मुक्ति और महिलाओं को शिक्षित बनाना। 1848 में पुणे के भिड़ेवाडा में 9 छात्राओं के साथ भारत का पहला बालिका विद्यालय खोला। ज्योतिराव फुले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज में सक्रिय भूमिका निभाई,जिसने सामाजिक समानता पर जोर दिया। वे मराठी की आदिकवयित्री के रूप में भी जानी जाती है। उन्होंने कविताएँ लिखी, जिनमें शिक्षा और समाज सुधार के विचार थे। स्कूल जाते समय उन्हें विरोध, पत्थरबाजी और कीचड़ फेंकने जैसी शारीरिक और मानसिक प्रताड़नाएं झेलनी पड़ी।

समाज सुधार के कार्यों के कारण उन्हें अपना घर भी छोड़ना पड़ा। सावित्रीबाई फुले को भारत में महिला-सशक्तिकरण और शिक्षा के क्षेत्र में एक प्रकाश-स्तम्भ और प्रेरणा स्रोत माना जाता है। उनके कई प्रेरणादायक विचार थे जो शिक्षा और महिला सशक्तिकरण पर केंद्रित थे। जैसे-

- "शिक्षा स्वर्ग का द्वार खोलती है, स्वयं को जानने का अवसर देती है।"
- "जाति की जंजीरें तोड़ो शिक्षा को अपना हथियार बनाओ।"
- "युद्ध का बिगुल बजाओ, तेजी से उठो, सीखो और कार्य करो।"

उनका मुख्य संदेश था: अज्ञानता को मिटाकर शिक्षा के माध्यम से आत्म-निर्भर बनना।

- उनके प्रमुख विचार थे- "शिक्षा महान समता लाने वाली है और यह हमें हमारी गुफाओं से बाहर ले जायेगी।"
- "स्वाभिमान से जीने के लिए पढ़ाई करो। पाठशाला ही इंसानो का सच्चा गहना है।"
- "ज्ञान के बिना सब कुछ खो जाता है,बुद्धि के बिना हम पशु बन जाते हैं।"
- "अज्ञान को पकड़ो, उसे जोर से पकड़ो,उस पर वार करो और उसे अपने जीवन से निकाल बाहर करो।"
- "स्त्रियाँ सिर्फ रसोई और खेत पर काम करने के लिए नहीं बनी है,वह पुरुषों से बेहतर कार्य कर सकती है।'"
- "अगर आप किसी महिला को खुश करना चाहते हैं, तो उसे आजादी और शिक्षा दें।"
- "शिक्षा वह कुंजी है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए अवसरों के द्वार खोलती है।'"
- "आलस्य गरीबी का लक्षण है। यह ज्ञान, धन और सम्मान का शत्रु है,और आलसी व्यक्ति को इनमें से कुछ भी प्राप्त नहीं होता।"
- "अशिक्षित महिला जड़ और पत्ता के बिना बरगद के पेड़ के समान है, वह न तो अपने बच्चों का पालन पोषण कर सकती है और न ही स्वयं जीवित रह सकती है।"
- मेरा मानना है कि शिक्षा ही हर महिला की मुक्ति की कुंजी है। शिक्षा आपके दिमाग को खोलने की कुंजी है। यह आपको अपने जीवन में कुछ करने की शक्ति प्रदान करती है।
- शिक्षा ही आत्म निर्भरता का का एक मात्र मार्ग है।
- एक सशक्त ,शिक्षित महिला एक सभ्य समाज का निर्माण कर सकती है,इ सलिये उसे भी शिक्षा का अधिकार होना चाहिये।

10 मार्च 1897 को पुणे में प्लेग पीड़ितों की सेवा करते हुए खुद प्लेग से संक्रमित हुई और उनका निधन हो गया।

शिक्षा की ज्योति से समाज को आलोकित करनेवाली क्रांति ज्योति प्रथम भारतीय महिला शिक्षिका को उनके जयन्ती पर कोटिशः नमन।

विश्वभाषा बनने की ओर हिंदी की यात्रा

- आस्था दीपाली

रा० कृत उ० मा० विद्यालय, कुढ़नी, मुज़फ़्फ़रपुर

मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार, "हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है।" हिंदी केवल भारत की एक भाषा नहीं बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक चेतना है, जो सदियों से भारतीय समाज की संवेदनाओं, संघर्षों, सपनों और सामूहिक स्मृतियों को स्वर देती आई है। आज जब वैश्वीकरण, तकनीक और बहुभाषिक संवाद का युग है, तब हिंदी की भूमिका केवल राष्ट्रीय स्तर तक सीमित नहीं रह गई है। वह धीरे-धीरे एक विश्वभाषा के रूप में अपनी पहचान सुदृढ़ कर रही है। यह यात्रा सहज नहीं रही, बल्कि ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पड़ावों से होकर आगे बढ़ी है। हिंदी की जड़ें अपभ्रंश और प्राकृत में मिलती हैं। भक्तिकाल में कबीर, तुलसीदास, सूरदास और मीरा जैसे संत कवियों ने हिंदी को लोकजीवन की भाषा बनाया। यह वह दौर था जब संस्कृत जैसी अभिजात भाषा के समानांतर हिंदी ने आम जन की अनुभूतियों को अभिव्यक्ति दी।

आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद और निराला जैसे साहित्यकारों ने हिंदी को सामाजिक यथार्थ, राष्ट्रचेतना और आधुनिक विचारों की भाषा बनाया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने जनजागरण और राष्ट्रीय एकता के सशक्त माध्यम के रूप में अपनी भूमिका निभाई।

स्वतंत्र भारत में हिंदी को संविधान के अनुच्छेद 343 के अंतर्गत संघ की राजभाषा का दर्जा मिला। यद्यपि भारत बहुभाषिक राष्ट्र है और अनेक भाषाओं का समान सम्मान आवश्यक है, फिर भी हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया। उत्तर भारत से निकलकर हिंदी धीरे-धीरे पूरे देश में समझी और बोली जाने लगी। प्रशासन, शिक्षा, मीडिया और साहित्य के माध्यम से इसका प्रसार निरंतर बढ़ता गया।

आज हिंदी विश्व की सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। भारत के अतिरिक्त नेपाल, मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद और टोबैगो जैसे देशों में हिंदी या हिंदी-आधारित भाषाएँ बोली जाती हैं। प्रवासी भारतीय समुदाय ने विदेशों में हिंदी को जीवित और सक्रिय रखा है। विश्व के अनेक प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों जैसे हार्वर्ड, ऑक्सफोर्ड, मॉस्को विश्वविद्यालय और टोक्यो विश्वविद्यालय में हिंदी अध्ययन और शोध के केंद्र स्थापित हैं। यह तथ्य हिंदी की अंतरराष्ट्रीय स्वीकार्यता को दर्शाता है। हिंदी के वैश्विक प्रसार में मीडिया और सिनेमा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। हिंदी सिनेमा, विशेषकर बॉलीवुड, ने दुनिया भर में हिंदी शब्दों, संवादों और गीतों को लोकप्रिय बनाया।

डिजिटल युग में सोशल मीडिया, यूट्यूब, पॉडकास्ट और ब्लॉगिंग ने हिंदी को नई उड़ान दी है। आज हिंदी में समाचार, साहित्य, शिक्षा, मनोरंजन और तकनीकी सामग्री बड़ी संख्या में उपलब्ध है। गूगल, माइक्रोसॉफ्ट और अन्य वैश्विक कंपनियाँ हिंदी को तकनीकी मंचों पर स्थान दे रही हैं, जिससे इसकी पहुंच और प्रभाव बढ़ा है।

तकनीकी विकास ने हिंदी के लिए नए अवसर खोले हैं। यूनिकोड, हिंदी टाइपिंग टूल्स, वॉयस-टू-टेक्स्ट और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित अनुवाद प्रणालियों ने हिंदी को डिजिटल दुनिया में सशक्त बनाया है।

आज मोबाइल फोन, सरकारी पोर्टल, बैंकिंग सेवाएँ और ऑनलाइन शिक्षा हिंदी में उपलब्ध हो रही हैं। इससे हिंदी केवल साहित्य या भावनाओं की भाषा नहीं, बल्कि ज्ञान, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा भी बन रही है।

विश्वभाषा बनने की यात्रा में हिंदी के सामने कई चुनौतियाँ भी हैं। अंग्रेज़ी का वैश्विक प्रभुत्व, उच्च शिक्षा और शोध में हिंदी का सीमित उपयोग, तथा वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली की कमी प्रमुख समस्याएँ हैं।

इसके अतिरिक्त, स्वयं हिंदी भाषियों में भी कभी-कभी अपनी भाषा के प्रति हीन भावना देखी जाती है। जब तक हिंदी को रोजगार, शोध और वैश्विक संवाद से पूरी तरह नहीं जोड़ा जाएगा, तब तक इसकी विश्वव्यापी प्रतिष्ठा सीमित रह सकती है।

इन चुनौतियों के समाधान के लिए बहुआयामी प्रयास आवश्यक हैं।

- उच्च शिक्षा और शोध में हिंदी माध्यम को सशक्त बनाना
- विज्ञान, तकनीक और कानून जैसे क्षेत्रों में मानक हिंदी शब्दावली का विकास
- अनुवाद कार्य को प्रोत्साहन
- अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी का अधिक प्रयोग
- युवाओं को डिजिटल माध्यमों के जरिए हिंदी से जोड़ना

सरकारी प्रयासों के साथ-साथ समाज और साहित्यकारों की भी इसमें अहम भूमिका है।

विश्वभाषा बनने की ओर हिंदी की यात्रा

- आस्था दीपाली

रा० कृत उ० मा० विद्यालय, कुढ़नी, मुज़फ़्फ़रपुर

विश्वभाषा बनने की दिशा में हिंदी की भूमिका अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में भी धीरे-धीरे सशक्त हो रही है। संयुक्त राष्ट्र में हिंदी को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाने की मांग समय-समय पर उठती रही है। भारत के प्रधानमंत्री और अन्य उच्च पदस्थ प्रतिनिधि अब अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी में भाषण देकर विश्व समुदाय को यह संदेश दे रहे हैं कि हिंदी केवल घरेलू संवाद की भाषा नहीं, बल्कि वैश्विक विचार-विमर्श की भाषा भी हो सकती है।

यह कूटनीतिक प्रयोग न केवल भाषा का सम्मान बढ़ाता है, बल्कि भारत की सांस्कृतिक अस्मिता को भी वैश्विक पहचान देता है।

आर्थिक उदारीकरण के बाद बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने यह समझा कि भारतीय बाज़ार तक पहुँचने के लिए हिंदी एक प्रभावी माध्यम है। विज्ञापन, ब्रांडिंग और उपभोक्ता संवाद में हिंदी का प्रयोग लगातार बढ़ रहा है।

ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म, ओटीटी चैनल और मोबाइल ऐप अब हिंदी इंटरफेस उपलब्ध करा रहे हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि हिंदी अब केवल साहित्यिक या भावनात्मक भाषा नहीं रही, बल्कि आर्थिक और व्यावसायिक भाषा के रूप में भी उभर रही है।

हिंदी साहित्य की वैश्विक स्वीकृति में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रेमचंद, निर्मल वर्मा, अज्ञेय, कृष्णा सोबती, महादेवी वर्मा और समकालीन लेखकों की कृतियाँ अनेक विदेशी भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं।

अनुवाद के माध्यम से हिंदी साहित्य की सामाजिक संवेदनशीलता, स्त्री विमर्श, दलित चेतना और मानवीय सरोकारों को अंतरराष्ट्रीय पाठक समझ पा रहे हैं। यह प्रक्रिया हिंदी को एक वैचारिक विश्वभाषा के रूप में स्थापित करने में सहायक है।

प्रवासी भारतीय समुदाय हिंदी के वैश्विक विस्तार का मजबूत आधार है। विदेशों में बसे भारतीय अपने सांस्कृतिक आयोजनों, हिंदी दिवस, कवि सम्मेलनों और साहित्यिक मंचों के माध्यम से हिंदी को जीवंत बनाए हुए हैं।

पंडित गोविंद बल्लभ पंत के अनुसार, "हिंदी का प्रचार और विकास कोई रोक नहीं सकता।" नई पीढ़ी भले ही द्विभाषिक हो, लेकिन गीत, फिल्म, सोशल मीडिया और पारिवारिक संवाद के माध्यम से हिंदी उनके जीवन में बनी हुई है। यही सांस्कृतिक निरंतरता हिंदी की वैश्विक शक्ति है।

नई शिक्षा नीति में मातृभाषा और भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता देना हिंदी के भविष्य के लिए एक सकारात्मक संकेत है। यदि प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक हिंदी को ज्ञान की भाषा के रूप में विकसित किया जाए, तो हिंदी का आत्मविश्वास स्वतः बढ़ेगा।

विश्वभाषा बनने के लिए किसी भाषा का केवल बोलचाल में लोकप्रिय होना पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उसका ज्ञान-भाषा होना अनिवार्य है।

हिंदी की सबसे बड़ी शक्ति उसकी संवेदनशीलता है। यह भाषा भावनाओं को सहजता से व्यक्त करती है, लेकिन अब समय है कि हिंदी को विज्ञान, तकनीक, चिकित्सा और शोध की भाषा के रूप में भी मजबूती दी जाए।

जब हिंदी में शोध पत्र, तकनीकी दस्तावेज़ और वैश्विक संवाद सहज रूप से होने लगेंगे, तब हिंदी की विश्वभाषा बनने की यात्रा पूर्णता की ओर बढ़ेगी।

हिंदी केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि संस्कृति, इतिहास और मानवीय मूल्यों की वाहक है। विश्वभाषा बनने का अर्थ यह नहीं कि वह अन्य भाषाओं को पीछे छोड़ दे, बल्कि यह कि वह संवाद का सेतु बने।

आज हिंदी उस मोड़ पर खड़ी है जहाँ उसके पास अवसर भी हैं और उत्तरदायित्व भी। यदि नीति, समाज और युवा पीढ़ी मिलकर इसे आगे बढ़ाएँ, तो वह दिन दूर नहीं जब हिंदी विश्व मंच पर केवल सुनी ही नहीं, बल्कि सम्मानपूर्वक स्वीकार की जाएगी।

हिंदी की यात्रा केवल अतीत की गौरवगाथा नहीं, बल्कि भविष्य की संभावनाओं से भरी कहानी है। आज हिंदी के पास विशाल भाषिक समुदाय, समृद्ध साहित्यिक परंपरा और तकनीकी समर्थन मौजूद है। आवश्यकता है तो केवल आत्मविश्वास, नवाचार और वैश्विक दृष्टि की।

यदि हिंदी अपनी जड़ों से जुड़े रहते हुए आधुनिकता को अपनाए, तो वह न केवल भारत की पहचान बनी रहेगी, बल्कि सच अर्थों में विश्वभाषा के रूप में स्थापित होगी। हिंदी की यह यात्रा निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है—एक ऐसी यात्रा, जो शब्दों के साथ-साथ संस्कृतियों और संवेदनाओं को भी जोड़ती है।

हिंदी प्रेम

- रूचिका

रा॰ उत्क्रमित म॰ वि॰ तेनुआ, गुठनी, सिवान

कल 01 सिंतबर है, कल से हिंदी पखवाड़ा शुरू होगा। कल से रोज हिंदी के उत्थान के लिए एक विशेष कार्यक्रम आयोजित होंगे। अतः बच्चों आप सब पूरे जोश के साथ तैयारी करना और इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए ज्यादा से ज्यादा संख्या में भाग लेना।" यह कहते हुए कॉन्वेंट विद्यालय के प्रधानाचार्य अपने बच्चों को सम्बोधित कर रहे थें।

यह सुनकर मासूम से एक बच्चे ने पूरी सभा में अपने हाथ खड़े कियें। सभी हतप्रभ थे, इस बच्चे को ऐसा क्या कहना है।

फिर भी बच्चे को माइक देकर पूछा गया, बताओ तुम्हें क्या कहना है?

बच्चे ने बड़ी मासूमियत से प्रश्न किया, "सर अगर हम हिंदी दिवस पर हिंदी में कुछ बोलेंगे तो दंड तो नही लगेगा न।"

सभी चुप हो गयें।

बच्चे ने फिर कहा, "दरअसल माँ बीमार हैं, घर में पैसे की कमी है अगर मुझे दंड लगा तो पिताजी कहाँ से लाकर पैसे देंगे।"

प्रधानाध्यापक की बोलती बंद थी।

हिंदी के दिवस विशेष पर प्रचार ने उनके हिंदी प्रेम को उजागर कर दिया था और कई मन में यह प्रश्न उठ खड़े हुए कि यह हिंदी का कैसा सम्मान है।

जो मात्र दिवस विशेष पर प्रदर्शित किया जाता है।

हिंदी हमारे हृदय की भाषा है, जो सरल सहज होते हुए सर्वग्राह्य है।

दिवस विशेष को इसके प्रति प्रेम प्रदर्शित करना बाकी दिन इसकी उपेक्षा करना इसके विकास के मार्ग को अवरुद्ध करता है।

इसलिए हिंदी को यथोचित सम्मान मिले इसके लिए प्रतिदिन एकजुट होकर प्रयास करना जरूरी है।

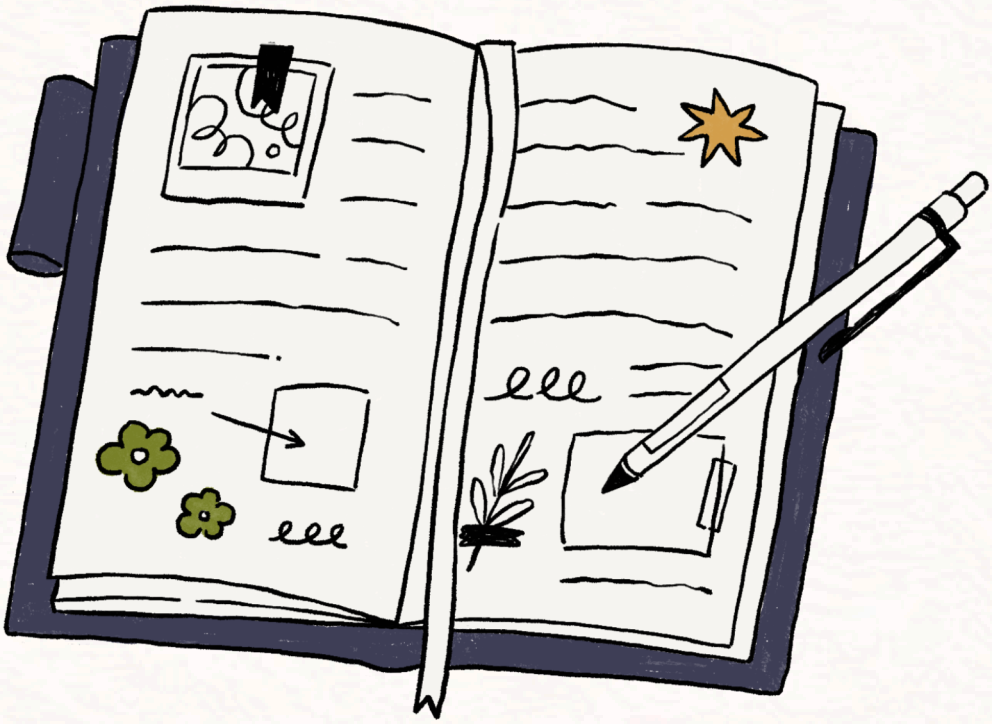

पथ की स्मृतियाँ

यात्रा लिंगराज मंदिर की

- अजय कुमार मीत

उत्क्रमित मध्य विद्यालय चाँपी कोढ़ा, कटिहार

कलिंग,यह शब्द सुनते ही बिहारी होने के कारण मेरे मानस पटल पर इतिहास के कालखंड का वह पन्ना अनायास ही खुल जाता है। जिसमें एक सम्राट जिसका साम्राज्य पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में वर्तमान म्यांमार तक था किन्तु उसकी राजधानी से ठीक दक्षिण में स्थित एक छोटे से राज्य ने उसे कभी सम्राट स्वीकार नहीं किया।जी हाँ, मैं भारतीय इतिहास के महान सम्राट अशोक की बात कर रहा हूँ। जिसके मन में यह टीस रही थी और इसके अंत के लिए उसने कलिंग पर आक्रमण कर दिया था।

इतिहासकार बताते हैं कि इस घनघोर युद्ध में कलिंग के सभी पुरुष सैनिक वीरगति को प्राप्त हो गए तो राजकुमारी पद्मावती के नेतृत्व में स्त्री योद्धाओं की छोटी सी टुकड़ी ने अपने राज्य की स्वतंत्रता और स्वाभिमान के लिए अशोक की बड़ी सेना के सामने मोर्चा सम्हाला और युद्ध भूमि में उपस्थिति हुई। युद्ध में हुए भयानक नरसंहार से व्यथित अशोक ने स्त्री सेना से नहीं लड़ने का निर्णय लिया और स्वयं को उनके सामने समर्पित कर अहिंसा और बौद्ध धर्म का मार्ग चुना। यह घटना भारतीय इतिहास के सबसे प्रभावी घटनाओं में एक सिद्ध हुई। जिस कारण से भारत ने एक तरफ मानवता के उत्कर्ष को छूआ और शांति तथा अहिंसा के साथ ज्ञान का संदेश विश्व के कई अन्य देशों तक पहुंचाया। वहीं कुछ लोगों का यह भी मानना है कि, बाद में इन्हीं कारणों से दुर्दांत हूणों, शकों, मुगलों द्वारा भारत को भारत पर आक्रमण भी हुए।

कलिंग इंस्टिट्यूट ऑफ इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (KIIT) से B.Tech हेतु जब छोटे पुत्र संस्कार सुमंत का चयन इस महाविद्यालय में हुआ तो इस संस्थान को देखने और महसूस करने की मेरी जिजीविषा प्रबल हो उठी। कटिहार से भुवनेश्वर के लिए सीधी रेल सेवा सप्ताह में मात्र दो दिन ही उपलब्ध है। जिसमें स्थान सुरक्षित न हो पाने के कारण कटिहार से सियालदह और शालीग्राम से भुवनेश्वर की यात्रा को रेल सेवा में आरक्षित सीट ने काफी आसान बना दिया। कटिहार से शाम सात बजे चलकर दूसरे शाम पांच बजे तक हम सपरिवार भुवनेश्वर पहुंच चुके थे। वर्षा ऋतु, रास्ते में हरे-भरे खेत, नारियल और केले के वृक्षों की प्रधानता संग बीच-बीच में छोटी-छोटी पहाड़ियों की उपस्थिति, जैसे एक गजब की मोहक छटा प्रस्तुत कर रही हो। स्वर्ण रेखा और महानदी के उफान पर सावन का असर प्रत्यक्ष दिख रहा था। भुवनेश्वर,एक शहर जो प्राचीनता और आधुनिकता का संगम स्थल है और यह दोनों को बड़ी ही सहजता से खुलकर जीता भी है।एक तरफ प्राचीन मंदिर समूहों की उपस्थिति तो दूसरी ओर आधुनिकतम मॉल संस्कृति।एक तरफ शहर की दिवालों पर उड़ीया कला की स्पष्ट छाप तो दूसरी ओर नवयुवक - नवयुवतियों के पहनावे में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भी दिखा।

सपरिवार सुबह तैयार होकर सबसे पहले शिव को समर्पित विश्वविख्यात मंदिर लिंगराज मंदिर पहुंचा।मन को हजारों साल की तपस्या का जैसे फल मिल गया हो। अद्भुत शांति में डूबे इस मंदिर समूह की बात ही क्या है। अतीत से जुड़ाव होता ही ऐसा है,मन जैसे उस कालखंड में जाकर जीने लगता है। 7वीं शताब्दी में नींव पड़ने के बावजूद 11वीं शताब्दी के राजा ययाति को इसके निर्माण का श्रेय दिया जाता है। कलिंग स्थापत्य शैली बलुआ पत्थरों से निर्मित यह मंदिर उड़ीसा के विशिष्ट मंदिर वास्तुकला का सर्वोच्च उदाहरण है। मंदिर के भीतरी और बाहरी दिवालों पर विभिन्न देवी -देवताओं, पौराणिक कथाओं के संग पशु-पक्षियों की नक्काशी भी देखते ही बनती है। लिंगराज मंदिर में पूजा-अर्चना के पश्चात स्टेशन से मात्र आठ किलोमीटर दूर स्थित उदयगिरि -खंडगिरि जुड़वां पहाड़ियों पर ईसापूर्व दूसरी शताब्दी की गुफाओं को देखने पहुंचे। एतिहासिक, स्थापत्य और धार्मिक दृष्टिकोण से ये गुफाएं काफी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कलिंग के राजा खारवेल के शासन काल में इन गुफाओं का निर्माण पत्थरों को काटकर-तराशकर किया गया है। ज्यादातर गुफाएं जैन साधकों को समर्पित हैं। जबकि कुछ गुफाओं में हिन्दू तथा बोद्ध आकृतियों से यह प्रमाणित होता है कि इनका भी यहाँ प्रभाव रहा है। गुफाओं में उत्कीर्ण मुर्तियां और शिलालेख न सिर्फ एतिहासिक, धार्मिक, स्थापत्य बल्कि शिलालेखीय दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।राजा खारवेल के शिलालेख विशेष रूप से पर्यटकों और शोधकर्ताओं को आकर्षित करते है, जो बहुत महत्वपूर्ण है। पत्थरों को काटकर-तराशकर ध्यान - साधना हेतु निर्मित इन गुफाओं में जीवन के लिए अत्यावश्यक सुविधाओं का बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से ध्यान रखा गया है।सोने के लिए सिरहाने में थोड़ा ऊंचा चट्टानी भाग,गुफा द्वार पर पर्दे टांगने की दोहरी व्यवस्था, अत्यावश्यक पदार्थ रखने के लिए ताखा,जल निकासी हेतु नालों तक जैसी सुविधाओं की व्यवस्था,सभी का निर्माण पत्थरों को

यात्रा लिंगराज मंदिर की

- अजय कुमार मीत

काटकर ही किया गया है। आटो रिक्शा वाले ने पहले ही सावधान कर दिया था कि गुफाओं को देखने के लिए पहाड़ियों पर चढ़ने के पूर्व खाना या नाश्ता बिलकुल ही न करें वरना उल्टी की शिकायत होने से परिभ्रमण का सारा मजा समाप्त हो जाएगा।हम सबने उसकी सीख का भरपूर उपयोग करते हुए उतरकर ही बिना लहसुन - प्याज वाली सब्जी से बजे थाली का आनंद लिया और प्रथम दिन के प्रवास पूर्ण कर अपने होटल लौट आए।

प्रवाहका दूसरा दिन कलिंग इंस्टिट्यूट ऑफ इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी, विश्वविद्यालय के नाम रहा। अपने नए छात्रों के स्वागत को तैयार यह विश्वविद्यालय अपने पूर्ण वैभव में दिखा। साफ-सुथरा, हरा-भरा व्यवस्थित 160एकड़ में फैला यह विश्वद्यालय का कैम्पस पूर्णतः अत्याधुनिक सुख-सुविधाओं से लैस भवन, प्रयोगशाला, इंटेलिजेंट ई-केम्पस, वाई-फाई आप्टिकल फाइबर नेटवर्क, विडियो काउंसिल जैसी सुविधाएं यहां उपलब्ध है। आगंतुकों को भ्रमण कराने के लिए जगह-जगह ई रिक्शा की सुविधा थी। नामांकन की औपचारिकता को काफी सरल और सहज बनाया गया था। सारी औपचारिकताएं पूर्ण कर वापस होटल और फिर सुबह की ट्रेन से हावड़ा होते हुए वापस कटिहार अपने निज आवास पर। सच कहूं तो यह यात्रा न सिर्फ भारत के समृद्ध प्राचीन सभ्यता -संस्कृति के दर्शन की थी बल्कि आधुनिक भारत के निर्माण की जरुरतों को पूरा करने में लगे नवयुवक -नवयुवतियों को तैयार करने वाले अत्याधुनिक संस्थान के दर्शन और उसमें अपनी सहभागिता को समर्पित रही। आधुनिक भारत के निर्माण को समर्पित ऐसे ही संस्थान हमारे आधुनिक मंदिर भी हैं। इस यात्रा ने हमें हमारे समृद्ध सांस्कृतिक, वैज्ञानिक और धार्मिक पहलुओं से न सिर्फ परिचय करवाया बल्कि उसके अत्याधुनिक विकल्प के प्रति जागरूक कर उसमें सहभागिता हेतु प्रोत्साहित भी किया।

पुरी यात्राः एक यादगार अनुभव

- मारुत नंदन पांडे

काफी उम्मीदों और योजना के बाद, आखिरकार मेरा पुरी यात्रा का सपना पूरा हुआ। मेरे परिवार के साथ यह यात्रा बेहद सुखद और यादगार रही। पुरी के नाम से ही मन मे भक्ति और मस्ती दोनों तरंगें दौड़ती है एक ओर प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर है तो दूसरी ओर समुन्द्र की लहरे।

पुरी यात्रा में मुख्य रूप से भगवान जगन्नाथ मंदिर और प्रसिद्ध रथ यात्रा शामिल है। रथ यात्रा हर साल आषाढ़ महीने में निकलती है, जिसमें भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा अपने रथों पर सवार होकर गुंडिचा मंदिर (मौसी के घर) जाते हैं।

अब मैं भी अपने अनुभव साझा कर रहा हूँ, ताकि यह किसी और के काम आ सके।

रहने का विकल्प:

अगर आप बजट फ्रेंडली स्टे की तलाश में हैं,होटल कमलिया अच्छा विकल्प हैं वहां का स्टाफ बहुत सहयोगी और जगह परिवार के लिए उपयुक्त है।

यात्रा के दौरान ऑटो रिक्शा का अनुभव:

पुरी में ऑटो रिक्शा वालों से थोड़ा सावधान रहना जरूरी है। कई बार वे ज्यादा किराया मांगते हैं, जो हर टूरिस्ट प्लेस पर आम हो चुका है। हमारी समस्या हल करने के लिए हमने अपने होटल वालों से एक ऑटो रिक्शा बुक करवाया। हमें एक ईमानदार और सहयोगी ऑटो ड्राइवर मिले, जिन्होंने न केवल हमें सभी प्रमुख जगहों पर घुमाया, बल्कि जब अन्य ड्राइवर ज्यादा किराया मांग रहे थे, तब उन्होंने हमारी मदद भी की।

पंडा जी से जुड़ा अनुभव:

पंडा जी को लेकर मुझे ग्रुप और स्थानीय लोगों से मिले-जुले विचार मिले। कुछ लोगों ने कहा कि पंडा जी की मदद लेनी चाहिए, तो कुछ ने इसे जरूरी नहीं माना। हमने अपने मामा जो वही रहते है उनकी मदद से दर्शन करने का निर्णय लिया। जगन्नाथ का आशीर्वाद अनुभव हुआ।

खाने-पीने के विकल्प:

जो मंदिर के मुख्य द्वार के पास स्थित है। वहां का खाना भी बेहद स्वादिष्ट था, लेकिन सर्विस थोड़ी धीमी थी, शायद कम स्टाफ के कारण।

पुरी में खाने-पीने के और भी कई अच्छे विकल्प मौजूद हैं, जिन्हें आप अपनी पसंद के अनुसार चुन सकते हैं।

कुल मिलाकर, हमारी यात्रा बेहद सुखद रही। सब कुछ अच्छे से हो गया। अगर आप भी पुरी जाने की योजना बना रहे हैं, तो यह समय सबसे बेहतर है। बिना ज्यादा सोचे यात्रा का आनंद लें।

जय जगन्नाथ!

टीचर्स ऑफ़ बिहार के 7वें स्थापना दिवस पर शिक्षाप्रेमियों के नाम पत्र

- ओम प्रकाश

म० वि० दोगच्छी, भागलपुर

1

प्रिय शिक्षाप्रेमी गण,

कर्म और कर्तव्य की राह चुनना केवल एक निर्णय नहीं होता, बल्कि यह निरंतर निभाया जाने वाला संकल्प होता है। टीचर्स ऑफ़ बिहार (ToB) ने अपने गठन के साथ ही यह स्पष्ट कर दिया था कि यह मंच केवल एक टीम या संगठन नहीं, बल्कि शिक्षा के प्रति समर्पण, सामाजिक दायित्व और शिक्षक एकता का सशक्त प्रतीक बनेगा। बीते 7 वर्षों की यह यात्रा संघर्ष, विश्वास और निरंतर परिश्रम से होकर गुज़री है।

मेहनत को पहचान और सेवा को संस्कार बनाकर ToB ने हर चुनौती को अवसर में बदला। सीमित संसाधनों, बदलती शैक्षणिक परिस्थितियों और अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों के बावजूद टीम का संकल्प कभी डगमगाया नहीं। जब मार्ग कठिन हुआ, तब टीमवर्क ने संबल दिया, जब लक्ष्य दूर प्रतीत हुए, तब अटूट विश्वास ने आगे बढ़ने की शक्ति प्रदान की।

ToB की वास्तविक ताकत इसके सभी सदस्य हैं। प्रत्येक शिक्षक, समन्वयक, मार्गदर्शक और सहयोगी ने अपने समय, अनुभव और ऊर्जा का निःस्वार्थ योगदान दिया। किसी ने विचार दिए, किसी ने तकनीकी सहयोग प्रदान किया, तो किसी ने सकारात्मक सोच से टीम को निरंतर प्रेरित किया। यह सामूहिक प्रयास ही वह आधार बना, जिस पर संगठन की सशक्त पहचान निर्मित हुई।

टीचर्स ऑफ़ बिहार आज केवल एक मंच नहीं, बल्कि एक परिवार, एक विचार और एक आंदोलन बन चुका है। यह वह स्थान है जहाँ प्रतिस्पर्धा नहीं, सहयोग है, जहाँ पद नहीं, सहभागिता है और जहाँ लक्ष्य केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं, बल्कि समग्र शैक्षिक उन्नयन है। इसी कारण यह संगठन शिक्षकों के विश्वास और सम्मान का केंद्र बन सका है।

7वें स्थापना दिवस के इस गौरवपूर्ण अवसर पर टीचर्स ऑफ़ बिहार केवल अपने बीते वर्षों की उपलब्धियों का उत्सव नहीं मना रहा, बल्कि भविष्य की नई संभावनाओं के लिए स्वयं को और अधिक दृढ़ संकल्पित भी कर रहा है। यह यात्रा किसी एक चेहरे, एक पद या एक नाम की नहीं, बल्कि हर उस सदस्य की है जिसने बिना किसी अपेक्षा के संगठन को अपना समय, श्रम और विश्वास दिया। टीम के प्रत्येक साथी का योगदान इस कारवां की शक्ति है।

सभी सदस्यों को उनके निरंतर सहयोग, प्रतिबद्धता और सकारात्मक ऊर्जा के लिए हार्दिक बधाई और आभार। विश्वास है कि ToB की यही एकता, यही कर्मनिष्ठा और यही टीम भावना, बिहार में शिक्षा को नई ऊँचाइयों तक ले जाएगी। आने वाला समय ToB के लिए केवल सफलताओं से भरा नहीं होगा, बल्कि शिक्षा और समाज को दिशा देने वाला स्वर्णिम अध्याय रचेगा।

2

प्रिय विद्यानुरागी गण

टीचर्स ऑफ़ बिहार : विचार से आंदोलन तक की यात्रा

समय केवल गुजरता नहीं, वह अपने साथ स्मृतियाँ, संघर्ष और संकल्प भी छोड़ जाता है। जब सात वर्ष पूर्व टीचर्स ऑफ़ बिहार का बीज रोपा गया था, तब यह केवल एक मंच नहीं था, यह उस मौन को तोड़ने का प्रयास था, जिसमें शिक्षकों का सतत श्रम अक्सर अनदेखा रह जाता है। यह एक ऐसी शुरुआत थी, जिसका उद्देश्य प्रचार नहीं, परिवर्तन था; लाभ नहीं, लोकहित था।

अपने अस्तित्व में आने के बाद से आज तक टीचर्स ऑफ़ बिहार ने अनुशासन को अपनी रीढ़ और निरंतरता को अपनी पहचान बनाया। बिना किसी वाणिज्यिक गतिविधि, बिना आर्थिक स्वार्थ और बिना आत्म–प्रशंसा के यह मंच निरंतर आगे बढ़ता रहा। यहाँ विचार बिके नहीं, बल्कि बाँटे गए; नाम उछाले नहीं गए, बल्कि कर्म बोले। बिहार के शिक्षकों द्वारा किए जा रहे शैक्षणिक प्रयोग, नवाचार, कक्षा–गत प्रयास और बच्चों के भविष्य को सँवारने वाली छोटी–छोटी उपलब्धियाँ इस मंच के माध्यम से असंख्य लोगों तक पहुँचीं।

यह मंच शिकायतों की भीड़ में समाधान की मशाल बनकर खड़ा रहा। जहाँ अधिकांश आवाज़ें असंतोष की ओर मुड़ जाती हैं, वहीं Teachers of Bihar ने कर्तव्य की दिशा पकड़ी। समस्याओं पर चर्चा हुई, किंतु उनका उत्सव नहीं मनाया गया। यहाँ शिक्षक वही नहीं बने जो प्रश्न उठाते हैं, बल्कि वे भी सामने आए जो उत्तर गढ़ते हैं, जो परिस्थिति से नहीं डरते, बल्कि उसे दिशा देते हैं।

इस यात्रा की सबसे बड़ी उपलब्धि मंच नहीं, मनुष्यों का मिलन रहा। टीचर्स ऑफ़ बिहार के माध्यम से ऐसे शिक्षक मिले जिनके लिए शिक्षण एक नौकरी नहीं, साधना है। ऐसे अभिभावकों से संवाद हुआ, जो बच्चों की आँखों में

टीचर्स ऑफ़ बिहार के 7वें स्थापना दिवस पर शिक्षाप्रेमियों के नाम पत्र

- ओम प्रकाश

म० वि० दोगच्छी, भागलपुर

केवल अंक नहीं, भविष्य देखते हैं। और ऐसे साथी मिले, जिन्होंने पद, पहचान और स्वार्थ से ऊपर उठकर कंधे से कंधा मिलाया, कदम से कदम जोड़कर इस विचारधारा को आगे बढ़ाया।

यह मंच हमें यह विश्वास दिलाता है कि परिवर्तन किसी आदेश से नहीं, बल्कि आचरण से जन्म लेता है। जब शिक्षक स्वयं सीखते हैं, एक–दूसरे को प्रेरित करते हैं और अनुभव साझा करते हैं, तब शिक्षा पाठ्यपुस्तकों से निकलकर समाज की चेतना बन जाती है।

आज टीचर्स ऑफ़ बिहार सात वर्षों की यात्रा पूरी कर चुका है, पर यह अभी विस्तार है। यह मंच अब स्मृतियों का संग्रह नहीं, संभावनाओं का संसार है।

इसकी शक्ति किसी कार्यालय में नहीं, उन कक्षाओं में है जहाँ शिक्षक आज भी उम्मीद जलाए खड़े हैं।

7वें स्थापना दिवस पर यह कहना अनुचित न होगा कि टीचर्स ऑफ़ बिहार ने स्वयं को प्रचार से नहीं, प्रयोजन से गढ़ा है। यह एक संगठन नहीं, एक संस्कार है—जो आज भी उसी निष्ठा से चल रहा है, और कल भी उसी विश्वास के साथ आगे बढ़ेगा।

क्योंकि जब उद्देश्य पवित्र हो,
तो यात्रा स्वयं इतिहास बन जाती है।

3

प्रिय साथियों,

कुछ यात्राएँ मंज़िल तक पहुँचने के लिए नहीं होतीं, वे रास्तों को अर्थ देने के लिए जन्म लेती हैं।

Teachers of Bihar भी ऐसी ही एक यात्रा है, जिसका उद्देश्य आगे बढ़ना भर नहीं, बल्कि साथ लेकर चलना है।

समय के साथ अनेक मंच बनते हैं, कुछ चमकते हैं और कुछ मिट जाते हैं, पर बहुत कम ऐसे होते हैं जो शोर से नहीं, शांति से अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। Teachers of Bihar ने कभी स्वयं को प्रचारित नहीं किया, फिर भी यह मंच हजारों शिक्षकों के हृदय में स्थान बना सका। क्योंकि यहाँ पद नहीं, सहभागिता है; प्रतिस्पर्धा नहीं, सहयात्रा है।

इस मंच की सबसे बड़ी विशेषता इसकी आत्मा है, अनुशासन में बंधी स्वतंत्रता। विचार स्वतंत्र हैं, पर उद्देश्य अनुशासित। संवाद खुले हैं, पर मर्यादा अडिग। यहाँ बोलने से पहले सुनने की परंपरा है और आगे बढ़ने से पहले साथ चलने की संवेदना। यही कारण है कि यह मंच भीड़ नहीं, समुदाय बन सका।

Teachers of Bihar ने शिक्षा को केवल पाठ्यक्रम के दायरे में नहीं बाँधा। यहाँ शिक्षक सीखने वाले भी हैं और सिखाने वाले भी। अनुभव की पाठशाला में वरिष्ठों की परिपक्वता है, युवाओं की ऊर्जा है और नवाचार की उत्सुकता है। इसी समन्वय ने इस मंच को पीढ़ियों के बीच सेतु बना दिया।

इस यात्रा में विशेष यह भी रहा कि यहाँ उपलब्धियों को प्रदर्शन नहीं, प्रेरणा बनाया गया। किसी एक का कार्य पूरे समुदाय की सीख बना। किसी एक की सफलता, सबकी संभावना बनी। यह मंच तालियों का नहीं, तालमेल का मंच रहा, जहाँ प्रशंसा से अधिक प्रोत्साहन को महत्व मिला।

Teachers of Bihar ने यह भी सिद्ध किया कि शिक्षा का विस्तार केवल विद्यालयों से नहीं होता, वह संवाद से भी जन्म लेती है। यहाँ संवाद ने भरोसे को जन्म दिया और भरोसे ने बच्चों के भविष्य को मजबूती दी। विचारों का यह संगम शिक्षा को सामाजिक जिम्मेदारी में रूपांतरित करता चला गया।

आज जब यह मंच अपने सातवें वर्ष की परिपक्वता में प्रवेश कर चुका है, तब इसकी पहचान किसी उपलब्धि सूची से नहीं, बल्कि उस विश्वास से होती है जो इससे जुड़ने वाले हर व्यक्ति की आँखों में झलकता है। यह मंच किसी एक समय की आवश्यकता नहीं, बल्कि निरंतर विकसित होती चेतना है।

Teachers of Bihar हमें यह याद दिलाता है कि जब शिक्षक साथ आते हैं, तो केवल संगठन नहीं बनते, संस्कृति जन्म लेती है और जब संस्कृति शिक्षित होती है, तब समाज स्वतः प्रगति की ओर अग्रसर हो जाता है।

यह किसी उत्सव की नहीं, उत्तरदायित्व की घोषणा है।

क्योंकि अब यह मंच आगे बढ़ने से ज्यादा आगे बढ़ाने की भूमिका में है।

और शायद यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है

यह मंज़िल नहीं बनना चाहता,
यह रास्ता बन जाना चाहता है।

टीचर्स ऑफ़ बिहार के 7वें स्थापना दिवस पर शिक्षाप्रेमियों के नाम पत्र

- ओम प्रकाश

म० वि० दोगच्छी, भागलपुर

4

प्रिय शिक्षानुरागी गण,

टीचर्स ऑफ़ बिहार के 7वें स्थापना दिवस उत्सव का समापन समारोह केवल एक औपचारिक कार्यक्रम नहीं, बल्कि भावनाओं, प्रेरणाओं और संकल्पों से भरा एक अविस्मरणीय अध्याय बन गया।

इस पावन अवसर पर जिन सप्तर्षि तुल्य अभिभावकों का सान्निध्य हमें प्राप्त हुआ, वह हमारे लिए सौभाग्य, मार्गदर्शन और ऊर्जा का अमूल्य स्रोत रहा।

आदरणीय डॉ० एस. सिद्धार्थ, पूर्व अपर मुख्य सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार जिनकी दूरदृष्टि ने शिक्षा को प्रशासन से आगे बढ़ाकर संवेदनशील सामाजिक उत्तरदायित्व बनाया;

आदरणीय डॉ० अमरिंदर बेहरा, संयुक्त निदेशक, CIET–NCERT, नई दिल्ली, जिनके विचारों में नवाचार, तकनीक और गुणवत्ता का सशक्त संगम झलका;

आदरणीया डॉ० उषा शर्मा, प्रभारी, राष्ट्रीय साक्षरता केंद्र प्रकोष्ठ, NCERT, जिनके शब्दों में "हर नागरिक तक शिक्षा" का मानवीय संकल्प गूंजता रहा;

आदरणीया डॉ० चारु स्मिता मालिक, असिस्टेंट प्रोफेसर, NCSL–NIEPA, जिनके मार्गदर्शन ने नेतृत्व और नीति की नई दृष्टि प्रदान की;

आदरणीय डॉ० चन्दन श्रीवास्तव, शैक्षिक समन्वयक, भारतीय भाषा समिति, शिक्षा मंत्रालय, जिनकी वाणी में मातृभाषा, भारतीय ज्ञान परंपरा और आत्मबोध की सुगंध रही;

आदरणीय संजय कुमार, उप निदेशक, SCERT बिहार जिनका सहयोग हमेशा ज़मीनी शिक्षा व्यवस्था को मजबूती देता रहा;

एवं आदरणीय डॉ० उदय कुमार उज्जवल, राज्य कार्यक्रम पदाधिकारी, बिहार शिक्षा परियोजना परिषद, जिनके अनुभव और मार्गदर्शन ने कार्य को नई दिशा और गति प्रदान की।

इन सभी मनीषियों का एक मंच पर सान्निध्य मिलना किसी यज्ञ में प्रज्ज्वलित सात दीपों के समान था जिनकी लौ ने शिक्षकों के मन, चिंतन और संकल्प को आलोकित किया। उनके आशीर्वचन केवल भाषण नहीं थे, बल्कि भविष्य की राह दिखाने वाले दीपस्तंभ थे। उनके सुझाव हमारे लिए नीति हैं, निर्देश पाथेय हैं और प्रेरणा वह शक्ति है जो हर शिक्षक को आत्मविश्वास से भर देती है।

यह समापन नहीं,
यह एक नए संकल्प की शुरुआत है।
यह उत्सव नहीं,
यह शिक्षा-सेवा की अनवरत साधना है।
और आपके आशीर्वाद से यह साधना निरंतर समाज, राज्य और राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करती रहेगी।

5

प्रिय शिक्षक गण,

हम शिक्षक ज्ञान, अनुभव और कला- तीनों में सक्षम होते हुए भी अक्सर आत्मविश्वास और प्रभावी प्रस्तुतीकरण की कमी के कारण विश्व पटल पर अपनी पहचान नहीं बना पाते। हमारे भीतर असीमित संभावनाएँ हैं, परंतु हमारे संघर्ष, हमारी साधना और हमारी उपलब्धियों की कहानियाँ समाज तक नहीं पहुँच पातीं।

इसीलिए आज आवश्यकता है ऐसे मंच की, जो विभागीय प्रोटोकॉल की सीमाओं से परे जाकर शैक्षणिक अधिगम, नवाचार, समर्पण और शिक्षक सम्मान को सशक्त स्वर दे सके। एक ऐसा मंच जो प्रतिभावान शिक्षकों के आत्मसम्मान, आत्मविश्वास और अभिप्रेरणा को नई ऊँचाई प्रदान करे। और यह हमारा सौभाग्य है कि ऐसा मंच आज हमारे पास है। "टीचर्स ऑफ बिहार", केवल एक समूह नहीं, यह एक विचारधारा है, एक पूर्ण विकसित और प्रभावी शैक्षणिक मंच है, जो हर उस शिक्षक के लिए तैयार है जो सीखना चाहता है, सिखाना चाहता है और नेतृत्व करना चाहता है। यह मंच कहता है, मेहनत कीजिए, कर्तव्य निभाइए, संघर्ष से मत घबराइए, और समर्पण के साथ निरंतर आगे बढ़ते रहिए।

क्योंकि टीचर्स ऑफ बिहार आपके लिए बना है, आपका ही मंच है, आपकी पहचान और आपकी आवाज़ है।

आइए,
जुड़िए,
सशक्त बनिए,
और शिक्षा के इस परिवर्तनकारी अभियान में
नेतृत्व की भूमिका निभाइए।

महत्वपूर्ण

- गद्य गुंजन अर्धवार्षिक पत्रिका है जिसे टीचर्स ऑफ़ बिहार द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। इस संग्रह में बिहार के शिक्षकों द्वारा स्वरचित कहानियाँ संकलित है।

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस पत्रिका के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य माध्यम से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।

- इस पत्रिका का विक्रय नहीं किया जा सकता है। यह केवल पढ़ने के उद्देश्य से निःशुल्क उपलब्ध है।

- इसमें प्रकाशित कहानियाँ 'टीचर्स ऑफ़ बिहार' की संपत्ति है। इसे किसी भी प्रकाशक या अन्य लेखक द्वारा उपयोग नहीं किया जा सकता है।

- पत्रिका के सभी लेख, चित्र और सामग्री के अधिकार लेखक और प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं।

- पत्रिका के किसी भाग को बिना पूर्व अनुमति के पुनः प्रकाशित या वितरित नहीं किया जा सकता है।

- इसमें प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक/रचनाकारों के निजी है।

आपको यह अंक कैसा लगा? अपनी प्रतिक्रिया अवश्य दें-

https://forms.gle/NZDunWk3kB4wUE8M8

हमसे जुड़ें-

ईमेल: writers.teachersofbihar@gmail.com

व्हाट्सएप चैनल : https://whatsapp.com/channel/0029Va9AFpI65yD3brB8SI17

अपनी रचनाएँ भेजने हेतु : https://gadyagunjan.teachersofbihar.org

वेबसाइट पर जाने के लिए QR कोड स्कैन करें